ॐ

गणेश प्रसादम्

हिंदू धर्म की कुछ प्रमुख जानकारियाँ, व्रत तथा पर्व, सुंदरकांड, आरती, भजन एवं श्लोक (अर्थ सहित)

आशा-मालती-रेखा-डॉ. रचना

डॉ. राकेश मिश्र

'नीलकंठ धाम', ग्राम-धवर्रा, नौगाँव-छतरपुर-471201 (म.प्र.)

मो. : 09868164888 • इ-मेल : mishradrrakesh@gmail.com

'शिक्षक दिवस' पर
दद्दा को समर्पित कविता

सूखी डाली को हरियाली
बेजान को जीवनदान दिया,
काले जीवन अँधियारे को
सौ सूरज सा धनवान किया;
जीवन के हर कठिन समय में
हर क्षण हर पल साथ दिया।
भाषा, दृष्टि, नई सृष्टि का गणित और विज्ञान सिखा,
धन ऋण गुणा भाग जीवन के और सदाचार का पाठ दिया।
कान पकड़ उठक-बैठक थी डाँटो की बरसात हुई,
समझ न पाई उस क्षण मैं जब अनुशासन की शुरुआत हुई।
मुखमंडल पर अंगार कभी
आँखों में निश्छल प्यार कभी,
अंतर में दद्दा के माँ सी ममता थी
सोनार कभी लोहार कभी,
आज मुखध्वनि आपकी अनुभव हुई
तो आँखों से अश्रु धार झरी;
यादों की झड़ी सी दौड़ गई
कुछ बेचैनी एहसास हुई।
आशीष आपका हम सब पर शत युगों-युगों तक बना रहे।
वंदन करने को शीष झुके स्पर्श का अनुभव साथ मिले॥

—अनुभूति मिश्रा (नातिन)

(शिक्षक दिवस पर ०५/०९/२०१६)

दद्‌दा तुम्हें प्रणाम

मान्यवर दद्‌दा तुम्हें प्रणाम,
मान्यवर दद्‌दा तुम्हें प्रणाम,
तुमने अपने जीवन का, हर जीता है संग्राम।
मान्यवर द्‌ददा तुम्हें प्रणाम॥

बचपन से ही देश प्रेम की ज्वाला रही धधकती,
सदा संघ से जुड़े रहे, मन में भगवा की भक्ति,
तन में है हिंदुत्व और मन में बसते श्रीराम।
मान्यवर द्‌ददा तुम्हें प्रणाम॥

दिए '**शांति**' ने संस्कार अपना पितृ धर्म निभाया,
अच्छे लालन-पालन का फल अच्छा तुमने पाया,
मेहनत करते रहे आप वर्षा-जाड़े और घाम।
मान्यवर दद्‌दा तुम्हें प्रणाम॥

'**आशा**' और '**मालती**' बिटिया न्यारी '**रचना-रेखा**',
दद्‌दा ने '**राकेश**', '**प्रमिला**' में, भविष्य को देखा,
नाती है **'संकल्प',** सभी में दिखते चारों धाम।
मान्यवर दद्‌दा तुम्हें प्रणाम॥

'श्री सतीश', 'जय', 'बृज विलास' घर के हैं जामाता,
अच्छी करनी का फल देता सबको भाग्य विधाता,
सुखी रहे परिवार, सभी के मन को है आराम।
मान्यवर दद्दा तुम्हें प्रणाम॥

चमक रहा **'राकेश'** क्षितिज पर पूर्ण हुई हर आशा,
उसने स्वयं भाग्यरेखा से गढ़ ली नई परिभाषा,
सदा सत्य को ईश समझकर करता है निज काम।
मान्यवर दद्दा तुम्हें प्रणाम॥

□

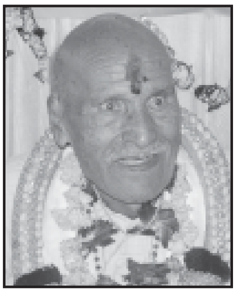

पं. गणेश प्रसाद मिश्र

पिता : स्व. श्री नीलकंठ मिश्र
ग्राम धवर्रा, पोस्ट नौगाँव
तहसील कुलपहाड़, जिला महोबा (उ.प्र.)

जन्मतिथि : १८.०७.१९२४ (श्रावण कृष्ण पक्ष द्वितीया विक्रम संवत् १९८१)
स्मृतिशेष : ०१.११.२०१६ (कार्तिक शुक्ल पक्ष द्वितीय विक्रम संवत् २०७३)

नौगाँव नगर के निकट ग्राम धवर्रा निवासी पं. गणेश प्रसाद मिश्र राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रथम पीढ़ी के कार्यकर्ता रहे। उनके चार पुत्रियाँ व एक पुत्र हैं। पोस्ट मास्टर से जीवन के कॅरियर की शुरुआत कर झाँसी में संघ प्रचारक बने। सन् १९४८ में गांधी हत्या के आरोप में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबंध के समय छह माह का कारावास हुआ। आपातकाल में भूमिगत रहकर १८ माह सक्रिय रहकर कार्य किया। हिंदी, अंग्रेजी, संस्कृत के प्रकांड विद्वान् पं. गणेश प्रसाद मिश्र एक मृदुभाषी, अनुशासन प्रिय व्यक्ति थे। उन्होंने कृषि कार्य में रुचि रखते हुए चिकित्सा के क्षेत्र में 'वैद्य' की उपाधि प्राप्त की। पुराने लोग उन्हें आज भी 'बड़े डॉक्टर साहब' के नाम से जानते हैं। 'दद्दाजी' के नाम से सुविख्यात वे तृतीय वर्ष शिक्षित होकर आजीवन संघ के सक्रिय स्वयंसेवक रहे। शिक्षक के नाते अनेक संघ शिक्षा वर्गों में एक-एक माह जाते रहे। शिक्षादान जैसे कार्य में उनकी विशेष रुचि होने से उन्होंने गणित, अंग्रेजी, संस्कृत के विषय में बी.ए., एम.ए. के अनेक छात्र-छात्राओं को सदैव ज्ञानोपार्जन कराया। सरस्वती शिशु मंदिर नौगाँव में आचार्य से लेखापाल तक उनका शानदार प्रदर्शन रहा। वे आजीवन गौसेवा में रत रहे। अपने अंतिम समय में पाँच गायों की सेवा-शुश्रूषा ही उनका मुख्य कार्य हो गया था। संभाग में जब कोई प्राइवेट आई.टी.आई. नहीं थी, तो उन्होंने कंपनी बाग ईसानगर रोड पर आई.टी.आई. प्रारंभ की, जो उत्तरोत्तर उन्नति करती गई। शिक्षा के प्रति उनकी रुचि का ही परिणाम था कि चारों पुत्रियों को मास्टर डिग्री तथा बी.एड. से शिक्षित कराया। वहीं एक पुत्री व पुत्र को डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी कराई। सभी पुत्रियाँ भी शिक्षकीय कार्य में हैं। वहीं पुत्र संघ के प्रचारकों की श्रेणी में आकर अ.भा.

विद्यार्थी परिषद् के प्रांत अध्यक्ष, प्रांत प्रमुख व प्रांत संगठन मंत्री महाकौशल प्रांत के दायित्वों में रहा है। डॉ. राकेश मिश्र आज भी भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अमित शाहजी के कार्यकारी सचिव के रूप में दिल्ली में कार्यरत हैं।

श्री मिश्रजी ने अयोध्या आंदोलन में, १९९० की कार सेवा में बढ़-चढ़कर भाग लिया। १९९२ में विवादित ढाँचा विध्वंस में छतरपुर जिले के दो कार सेवकों में से वे एक थे, जो वहाँ पहुँच सके। १९९० की कश्मीर की 'एकता यात्रा' में डॉ. मुरली मनोहर जोशीजी के नेतृत्व में यात्रा के समापन में लाल चौक पर तिरंगा ध्वज फहराने के लिए गए। भारत भ्रमण व संस्कृति परिचय में उनकी गहन रुचि रही। लेह-लद्दाख में सिंधुदर्शन यात्रा रही हो या अमरनाथ की यात्रा, वे हर जगह सप्तनीक सहभागी रहे। अरुणाचल प्रदेश का परशुराम कुंड हो या कन्याकुमारी में घनुषकोटि तथा गंगोत्तरी में गोमुख तक की दुर्गम यात्रा या गंगासागर का पवित्र जल, सभी दुर्गम स्थानों पर आम पर्यटक की तरह उन्होंने यात्राएँ कीं। अपने अनुभवों का लेखन साझा किया। साधनों की शुचिता व नैतिकता के पक्षधर श्री मिश्र ध्येय के प्रति समर्पित, दृढ निश्चयी व कठोर परिश्रमी रहे। जब लोग त्योहार में प्रसन्नता मनाते, वे अपने कार्य में मौन रूप से लगे रहकर दीन-दु:खियों के साथ सेवा में लगे रहते थे।

९३ वर्ष की आयु में वे पूर्ण स्वस्थ थे। १६ अप्रैल, २०१६ को अचानक हुए ब्रेन हेमरेज में वे कोमा में चले गए। नई दिल्ली स्थित अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (AIIMS) व डॉ. राममनोहर लोहिया अस्पताल में तीन माह तक गहन चिकित्सा हुई। न्यूरो वैज्ञानिकों के लिए इतनी उम्र का यह पहला केस था, जिसमें रोगी इतनी तीव्र गति से ठीक होकर पुन: नौगाँव अपने घर पर ही विश्राम करने लगा। डॉक्टरों का मत था कि इनकी गौसेवा, खानपान, दिनचर्या से ही इनका जीवन प्रेरणादायी है। ०१.११.२०१६ को प्रात: ६.३० बजे वे इस लोक से मुक्ति पाकर गोलोक धाम को प्रस्थान कर गए। अंतिम संस्कार में देश-विदेश की महान् हस्तियों के शोक संदेश प्राप्त हुए। संपूर्ण जिले के प्रमुख व्यक्तियों ने दिवंगत आत्मा को श्रद्धासुमन एवं श्रद्धांजलि अर्पित की। दिल्ली से लेकर गाँव तक शोक की लहर दौड़ गई।

ऐसे महान् प्रेरक व्यक्तित्व को प्रणाम और विनम्र श्रद्धांजलि!

अनुक्रम

१. हिंदू धर्म का संक्षिप्त परिचय ११
२. हिंदू धर्म के सोलह संस्कार १३
३. हिंदू धर्म के कुछ प्रमुख व्रत और पर्व २०
४. सुंदरकांड ३६

आरतियाँ

१. आरती श्री गणेश जी ६७
२. आरती श्री दुर्गा जी ६८
३. आरती श्री शंकर जी ७०
४. आरती श्री जगदीश जी ७१
५. आरती श्री सत्यनारायण जी ७२
६. आरती श्री रामचंद्र जी ७३
७. आरती श्री कुंजबिहारी जी ७४
८. आरती श्री हनुमान जी ७५
९. आरती श्री लक्ष्मी जी ७६
१०. आरती श्री सरस्वती जी ७७
११. आरती श्रीकृष्णजी की ७८
१२. आरती श्री वैष्णो जी ७९

चालीसाएँ

१.	श्रीदुर्गा चालीसा	८०
२.	श्रीहनुमान चालीसा	८४

भजनमाला

१.	भय प्रगट कृपाला दीनदयाला···	८८
२.	तोरा मन दरपन कहलाए	८९
३.	माटी कहे कुम्हार से	९०
४.	ऐ मालिक तेरे बंदे हम	९२
५.	उठ जाग मुसाफिर भोर भई	९३
६.	कभी राम बनके, कभी श्याम बनके	९४
७.	सीताराम, सीताराम, सीताराम कहिए	९५
८.	तेरा रामजी करेंगे बेड़ा पार	९६
९.	कभी-कभी भगवान को भी···	९७
१०.	तेरे मन में राम	९८
११.	पायो जी मैंने···	९९
१२.	भजो रे मन गोविंदा···	१००
१३.	मुकुंद माधव गोविंद बोल	१०१
१४.	यशोमति मैया से बोले	१०२
१५.	तूने मुझे बुलाया	१०३
१६.	वर दे, वर दे वीणावादिनि	१०४
१७.	मंगल भवन अमंगल हारी	१०५
१८.	जोत से जोत जलाते चलो	१०७
१९.	अब सौंप दिया इस जीवन का	१०९
२०.	मैली चादर ओढ़	११०

२१. सरस्वती वंदना १११
२२. इतनी शक्ति हमें देना दाता ११३
२३. मन मैला और तन को धोए ११४
२४. दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया ११६
२५. श्रीराधे गोविंदा मन भज ले··· ११८
२६. जग में सुंदर हैं दो नाम १२०
२७. चदरिया झीनी रे झीनी १२२
२८. ऐसी लागी लगन १२४
२९. इतना तो करना स्वामी, जब प्राण तन से निकले १२६

जानने योग्य विशेष बातें **१२६**

हिंदू धर्म के कुछ प्रतीक १३०

हिंदू धर्म के विज्ञान सम्मत कुछ तथ्य

- 'ओ३म्' की संसार में गूँज १३४
- बोतल बंद गंगाजल महीनों बाद भी दूषित नहीं होता—क्यों? १३५
- गौ-पूजन का वैज्ञानिक आधार १३६
- सबसे पहले गणेश की ही पूजा क्यों? १३९
- कौन से गणेश की मूर्ति घर के पूजागृह में रखनी चाहिए १४०
- नवरात्रों का वैज्ञानिक व आध्यात्मिक रहस्य १४१
- १०८ दानोंवाली जपमाला का अंक-विज्ञान १४२
- हिंदू अपने शव क्यों जलाते हैं? १४४
- विवाह पूर्व जन्मकुंडली मिलाने के पीछे का विज्ञान १४५

- तुलसी के पौधे व पत्तों का वैज्ञानिक महत्त्व १४७
- दान क्यों देना चाहिए? १४९
- पूजा-पाठ में चंदन का प्रयोग क्यों करते हैं १५२
- पूजा-पाठ में प्रयोग होनेवाले विशेष पदार्थों का विज्ञान १५३
- आरती उतारने के पीछे का विज्ञान १५४
- किस देवी-देवता पर कौन सा पुष्प चढ़ाएँ १५६
- शरत् पूर्णिमा की रात्रि में चंद्र किरणों से भीगी खीर खाने का विज्ञान १५९
- सनातन-ध्वजा केसरिया क्यों? १६०
- मंगलवार को नाखून व बाल क्यों नहीं काटने चाहिए? १६०
- सोते समय पाँव दक्षिण दिशा की ओर क्यों नहीं रखने चाहिए? १६२
- प्राचीन काल में पुरुषों का कर्ण-छेदन क्यों? १६२

कुछ प्रमुख मंत्र-श्लोक १६४

हिंदू धर्म का संक्षिप्त परिचय

हिंदू धर्म को सर्वाधिक प्राचीन और शाश्वत धर्म होने का गौरव प्राप्त है। भारत की लगभग तीन-चौथाई आबादी हिंदू धर्मावलंबी है। दुनिया के दूसरे देशों में भी हजारों हिंदू मतावलंबी रहते हैं। हिंदू धर्म का कोई संस्थापक नहीं है, न ही इसका प्रतिपादन किसी एक व्यक्ति अथवा ईश्वर द्वारा हुआ है। जैसा कि पहले ही कहा गया है—यह शाश्वत धर्म है। हिंदू धर्म में लोग अनेक देवी-देवताओं की पूजा करते हैं। यह इस धर्म की विविधता, उदारता और उदात्तता है कि इसमें नदियों, वृक्षों और पर्वतों को भी देवी-देवताओं की भाँति पूजा जाता है। पूजा, प्रार्थना, आराधना, स्तुति—मार्ग के अंतिम और सर्वोच्च पड़ाव हैं, इसलिए हिंदू धर्मग्रंथ मोक्ष-प्राप्ति के उपायों से भरे पड़े हैं।

संसार में हिंदू धर्म ही इतना सहिष्णु है, जो वसुधैव कुटुम्बकम् की बात करता है। पूरी दुनिया को एक परिवार मानता है और सभी के कल्याण की कामना करता है। प्रेम, प्यार, सत्य, न्याय, सौहार्द, सहिष्णुता, संवेदनशीलता तथा पुरुषार्थ इसके स्वाभाविक गुण हैं। इतिहास साक्षी है कि दुनिया के कितने ही धर्मों को यहाँ प्रश्रय मिला, सभी धर्म यहाँ भरपूर फले-फूले हैं। किसी प्रकार का कोई टकराव नहीं रहा है। विद्वानों का कहना है कि हिंदू कोई धर्म नहीं, यह तो जीवन-पद्धति है, जीवन को जीने का सलीका है, जो व्यक्ति को चरम विकास की ओर ले जाता है। धर्म का अर्थ ही है—धारण करना, आलंबन देना, पालन करना।

मनुस्मृति में हिंदू धर्म के दस लक्षण बताए गए हैं—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीविर्द्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

अर्थात् धैर्य, संतोष एवं सहनशीलता, क्षमा, मन पर विजय, चोरी न करना, धूर्तता, पाखंड, विश्वासघात, कम देना-अधिक लेना, कालाबाजारी, मिलावट का त्याग, शुचिता—पवित्रता-शरीर और मन दोनों की शुद्धता, निर्मल बुद्धि, ब्रह्म विद्या का ज्ञान, सत्य बोलना और क्रोध न करना। हिंदू संस्कृति में धर्म का मतलब है—कर्तव्य। विद्यार्थी का धर्म, शिक्षक का धर्म, शासक का धर्म, प्रजा का धर्म, व्यापारी का धर्म, सैनिक का धर्म, अधिकारी का धर्म, स्त्रियों का धर्म, पुरुष का धर्म, गृहस्थ का धर्म, संन्यासी का धर्म। ऐसी विस्तृत सोच और सहिष्णुता वाला धर्म संसार में दूसरा कोई नहीं है।

प्राचीन वाङ्मय भारतीय संस्कृति की बहुमूल्य निधियों में एक है। इसमें वेद, पुराण, ब्राह्मण, उपनिषद्, सांख्य, स्मृति, भाष्य, रामायण, महाभारत, गीता एवं अन्य साहित्यिक आख्यायिकाएँ हैं। ये अमूल्य निधियाँ विश्वगुरु होने की क्षमता रखनेवाले हिंदू और हिंदू धर्म का भान कराती हैं। सारी मानवजाति के लिए हिंदू धर्म की एक ही कामना है—'सर्वे सन्तु निरामया, सर्वे भद्राणि पश्यन्तु।'

□

हिंदू धर्म के सोलह संस्कार

संस्कार क्या है? दोषों का निवारण, कमी या त्रुटि-पूर्ति करते हुए शरीर और आत्मा में अधिकाधिक गुणों को बढ़ानेवाले शास्त्र सम्मत क्रिया-कलाप या कर्मकांड ही 'संस्कार' कहलाते हैं। अतः हिंदू धर्म में सोलह संस्कारों का विधान किया गया है, जो इस प्रकार हैं—

१. गर्भाधान संस्कार

जिस कर्म द्वारा पुरुष अपनी स्त्री में अपना बीज (वीर्य) स्थापित करता है, उसे 'गर्भाधान' कहते हैं। गर्भाधान के समय स्त्री-पुरुष जिस भाव से भावित होते हैं, अर्थात् जैसी भावना उनके मन में होती है, उसका प्रभाव उनके रज-वीर्य पर भी पड़ता है और उस रज-वीर्यजन्य संतान पर भी। वे भाव ही पूर्व कर्म के फल का समन्वय करते हुए बालक के रूप में प्रकट होते हैं।

ऋतुकाल की निंदित छह रात्रि और अनिंदित दस रात्रियों में से कोई भी आठ रात्रि में स्त्री संसर्ग करनेवाले के ब्रह्मचर्य की हानि नहीं होती। गर्भाधान में रजोदर्शन के निकट भी क्रमशः बादवाली रात्रियाँ अधिक अनुकूल होती हैं। सत्रहवीं रात्रि से पुनः रजोदर्शन की चौथी रात्रि तक सर्वथा संयम से रहना चाहिए। भोग की संख्या जितनी कम होगी, शुक्र की नीरोगता, पवित्रता और शक्तिमत्ता उतनी ही बढ़ेगी। भोग-सुख भी उसी में अधिक प्राप्त होगा और संतान भी स्वस्थ, मेधावी, पुष्ट, धर्मशील तथा संवर्धनशील होगी।

२. पुंसवन संस्कार

गर्भ-धारण का निश्चय हो जाने के पश्चात् गर्भस्थ शिशु को पुंसवन नामक संस्कार द्वारा संस्कारित किया जाता है। पुंसवन संस्कार से तात्पर्य सामान्यतः उस

कर्म से है, जिसके अनुष्ठान से 'पुं' = पुमान (पुरुष) का जन्म हो।

गृह्य सूत्रों में पुंसवन संस्कार गर्भ-धारण के पश्चात् तीसरे अथवा चौथे मास में या उसके भी पश्चात् उस समय संपन्न करने का निर्देश है, जब चंद्र किसी पुरुष नक्षत्र, विशेषतः पुष्य नक्षत्र में संक्रमण कर जाए।

३. सीमंतोन्नयन संस्कार

गर्भ का तीसरा संस्कार 'सीमंतोन्नयन' है। इस संस्कार में गर्भिणी स्त्री के केशों (सीमंत) को ऊपर उठाया (उन्नयन) जाता है, इसलिए यह नाम दिया गया। इसे सीमंत-करण या सीमंत-संस्कार भी कहते हैं। इस संस्कार का उद्देश्य गर्भ की शुद्धि व रक्षा करना है।

सामान्यतः गर्भ में चार मास के बाद भ्रूण के अंग-प्रत्यंग, हृदय आदि प्रकट हो जाते हैं। चेतना का स्थान हृदय बन जाने के कारण गर्भ में चेतना आ जाती है। इसलिए उसमें इच्छाओं का उदय होने लगता है। वे इच्छाएँ माता के हृदय में प्रतिबिंबित होकर प्रकट होती हैं, जो 'दोहद' कहलाती हैं।

४. निष्क्रमण संस्कार

निष्क्रमण संस्कार करने का समय जन्म के पश्चात् बारहवें दिन से चतुर्थ मास तक भिन्न-भिन्न है। 'भविष्यपुराण' तथा 'बृहस्पति-स्मृति' इस संस्कार के लिए बारहवें दिन का विधान करते हैं। किंतु गृह्य सूत्रों व स्मृतियों के अनुसार जन्म के पश्चात् तीसरे या चौथे मास में यह संस्कार करने का विधान है। इसका कारण यह है कि तृतीय मास में शिशु को सूर्यदर्शन और चतुर्थ मास में चंद्रदर्शन कराना चाहिए।

इस संस्कार का मुख्य उद्देश्य है शिशु की आयु में वृद्धि करना। तीन माह तक बालक का शरीर अपरिपक्व होता है। इस कारण वह प्रसूति गृह के अनुकूल वातावरण एवं परिस्थिति में ही रहता है। प्रसूति गृह में सीमित रहने की अवधि समाप्त हो जाने पर माता उस छोटे से कमरे से बाहर आती है और पुनः पारिवारिक जीवन में भाग लेना आरंभ कर देती है। इसके साथ ही शिशु का संसार भी कुछ अधिक विस्तृत हो जाता है।

५. अन्नप्राशन संस्कार

ठोस भोजन या अन्न खिलाना शिशु के जीवन में एक अन्य महत्त्वपूर्ण सोपान

है। अब तक अपने भोजन के लिए शिशु केवल माता के दूध पर आश्रित था, किंतु छह या सात मास के पश्चात् उसका शरीर विकसित हो जाता है और उसके लिए अधिक मात्रा में भिन्न प्रकार के भोजन की आवश्यकता होती है। इस समय तक माता के स्तनों में दूध भी घटने लगता है। अतः शिशु और माता दोनों के लिए आवश्यक है कि माता के दूध के स्थान पर शिशु के लिए किसी खाद्य की व्यवस्था की जाए। इस प्रकार अन्नप्राशन संस्कार शिशु की शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति से संबद्ध है। गृह्य सूत्रों के अनुसार यह संस्कार शिशु के जन्म के पश्चात् छठे मास में किया जाना चाहिए।

६. जातकर्म संस्कार

इस संस्कार से गर्भस्रावजन्य समस्त दोष नष्ट हो जाते हैं। शिशु का जन्म होते ही यह संस्कार करने का विधान है। 'मेधाजनन' शिशु के बौद्धिक विकास का कृत्य है। इस अवसर पर उच्चरित व्याहृतियाँ वृद्धि की प्रतीक हैं। इनका पाठ गायत्री मंत्र के साथ किया जाता है, जिसमें बुद्धि को प्रेरित करने की प्रार्थना की गई है। जो पदार्थ शिशु को चटाए जाते हैं, वे भी उसके मानसिक विकास में सहायक होते हैं।

जातकर्म संस्कार का द्वितीय कृत्य है—आयुष्य। यह कृत्य नालच्छेदन के पश्चात् किया जाता है। इसमें पिता या आचार्य यज्ञ करता है तथा शिशु के दाएँ या बाएँ कान में आठ मंत्रों का उच्चारण करते हुए शिशु के मेधा, बुद्धि, बल, स्वास्थ्य एवं दीर्घजीवी होने की प्रार्थना करता है।

७. नामकरण संस्कार

शिशु के नाम का चुनाव सामान्यतः धार्मिक भावनाओं से संबंधित है। जन्म से दस रात्रि के बाद, ग्यारहवें दिन या कुलक्रमानुसार सौवें दिन या एक वर्ष बीत जाने के बाद नामकरण संस्कार करने की विधि है। इसका एकमात्र अपवाद है 'गुह्यनाम', जो जन्म के दिन रखा जाता है। ज्योतिष विषयक ग्रंथों के अनुसार प्राकृतिक, असाधारण व धार्मिक अनौचित्य की स्थिति में उक्त दिनों में भी वह संस्कार स्थगित किया जा सकता है। संक्रांति, ग्रहण या श्राद्ध के दिन संपन्न संस्कार मंगलमय नहीं माना जाता।

शिशु का नामकरण उसके वंश-परंपरा के अनुसार ही रखा जाना प्रशस्त है। ब्राह्मण शिशु का नाम शर्मांत, क्षत्रिय का वर्मांत, वैश्य का प्रसादांत और शूद्र का

दासांत नाम रखने की परंपरा है। किंतु वर्तमान में इस परंपरा से हटकर भी नाम रखे जा रहे हैं।

८. कर्णवेध संस्कार

कर्णवेध संस्कार बालक के उपनयन के पूर्व किया जाता है। बालक में पूर्ण पुरुषत्व एवं बालिका में पूर्ण स्त्रीत्व के लिए यह संस्कार उपयोगी है। शास्त्रों में तो कर्णवेध-रहित पुरुष को श्राद्ध का अधिकारी भी नहीं माना गया है।

बृहस्पति के अनुसार, कर्णवेध संस्कार शिशु के जन्म के पश्चात् दसवें, बारहवें अथवा सोलहवें दिन करना चाहिए। आचार्य गर्ग के अनुसार षष्ठ, सप्तम, अष्टम अथवा द्वादश मास इस संस्कार के लिए उपयुक्त समय है। श्रीपति के अनुसार, शिशु के दाँत निकलने के पूर्व और जब शिशु माता की गोद में ही खेलता हो, उसी समय कर्णवेध संस्कार संपन्न करना चाहिए।

९. चूड़ाकरण संस्कार (वपन क्रिया)

धर्मशास्त्रों के अनुसार संस्कारी व्यक्ति के लिए दीर्घ आयु, सौंदर्य तथा कल्याण की प्राप्ति इस संस्कार का उद्देश्य है। चूड़ाकरण से दीर्घायु प्राप्त होती है तथा इसे न करने पर आयु क्षीण होती है। अतः प्रत्येक दशा में यह संस्कार करना ही चाहिए।

चूड़ाकर्म संस्कार के मूल में स्वास्थ्य तथा सौंदर्य की भावना ही मुख्य थी, किंतु कुछ मानव-शास्त्रियों के अनुसार इस संस्कार का प्रयोजन बलि था, अर्थात् केश काटकर किसी देवता को अर्पित कर दिए जाते थे। शिशु के चौलकर्म या मुंडन संस्कार या वपन क्रिया का महत्त्व शास्त्रों में विशेष रूप से बताया गया है। इसे प्रायः तीसरे, पाँचवें या सातवें वर्ष या कुल की परंपरा के अनुसार करने का विधान है। चूड़ाकर्म का दूसरा नाम 'मुंडन संस्कार' भी है।

१०. उपनयन (व्रतादेश) संस्कार

अथर्ववेद में 'उपनयन' शब्द का प्रयोग ब्रह्मचर्य को ग्रहण करने के अर्थ में हुआ है। उपनयन संस्कार उस समय किया जाता है, जब बालक का मानसिक विकास तीव्र गति से होने लगता है। इसी समय उसकी भावनाओं में परिवर्तन संभव है। अतः ब्राह्मण बालक का आठवें, क्षत्रिय बालक का ग्यारहवें तथा वैश्य बालक का बारहवें वर्ष में उपनयन संस्कार करना अनिवार्य है। यदि इस अवस्था

तक यह संस्कार नहीं हो सके तो ब्राह्मण बालक का सोलहवें, क्षत्रिय बालक का बाईसवें तथा वैश्य बालक का चौबीसवें वर्ष में यह संस्कार अवश्य हो जाना चाहिए, अन्यथा दोष लगता है।

उपनयन संस्कार मुख्यतः बालक के संयमित जीवन के साथ आत्मिक विकास का व्रत लेने का विधान है। इस संस्कार का मुख्य संबंध गुरुकुल प्रथा से है। जब बालक को प्रथम बार गुरुकुल में भेजा जाता था तो आचार्य सर्वप्रथम उसका हेमाद्रि करके मुंडन कराता था। इसके बाद उसे मेखला, दंड, कौपीन आदि धारण कराता था और उस बालक को ब्रह्मचारी स्वीकार करता था तथा बालक से हवन कराकर उसे अपने कर्तव्य शुद्ध करने, दिन में न सोने, वाणी पर संयम रखने आदि का उपदेश देता था। तत्पश्चात् उसके कान में तीन बार गायत्री मंत्र का उपदेश करता था। इसके बाद वह बालक गुरु का अभिवादन करके भिक्षा माँगकर लाता था और उसे गुरु को अर्पण कर देता था। इस संस्कार के संपन्न होने पर ही आचार्य उसको वेदाध्ययन आरंभ कराते थे। उपनयन संस्कार के बाद बालक में तेज, बल और वीर्य का आधान होता है। ये तीनों तत्त्व ईश्वर से उत्पन्न माने गए हैं।

११. वेदारंभ संस्कार या वेद स्वाध्याय

उपनयन के पश्चात् वेदारंभ संस्कार करने के लिए किसी शुभ दिन के आरंभ में मातृपूजा, आभ्युदयिक श्राद्ध तथा अल्प आवश्यक कृत्य किए जाते थे। तब आचार्य लौकिक अग्नि प्रतिष्ठित करके विद्यार्थी को अग्नि की पश्चिम दिशा में बैठाता था। इसके बाद साधारण आहुतियाँ दी जाती थीं। यदि विद्यार्थी को ऋग्वेद का अध्ययन आरंभ करना होता था तो घृत की दो आहुतियाँ अग्नि व पृथ्वी को दी जाती थीं। यदि यजुर्वेद का अध्ययन आरंभ करना होता था तो अंतरिक्ष व वायु को, यदि सामवेद का अध्ययन आरंभ करना होता था तो द्यौ और सूर्य को और यदि अथर्ववेद का अध्ययन आरंभ करना होता था तो दिशाओं तथा चंद्र को आहुतियाँ दी जाती थीं। यदि सभी वेदों का अध्ययन आरंभ करना होता तो उक्त सभी आहुतियाँ साथ ही दी जाती थीं। इसके अतिरिक्त ब्रह्म, छंदस् तथा प्रजापति के लिए होम किए जाते थे। अंत में आचार्य, ब्राह्मण, पुरोहित को पूर्णपात्र और दक्षिणा देकर वेद का अध्यापन आरंभ होता था।

१२. केशांत (गोदान) संस्कार

इस संस्कार का संबंध भी गुरुकुल प्रथा से है। केशांत अथवा प्रथम क्षौरकर्म चार वैदिक व्रतों में से एक था। केशांत संस्कार में ब्रह्मचारी के श्मश्रु का सर्वप्रथम क्षौर किया जाता था। इसे 'गोदान' भी कहते थे, क्योंकि इस अवसर पर आचार्य को गौ का दान किया जाता था तथा नाई को उपहार दिए जाते थे।

यह संस्कार सोलह वर्ष की आयु में संपन्न होता था। यह ब्रह्मचारी के यौवन के पदार्पण का सूचक था। इस संस्कार में भी सभी संस्कारों की भाँति सर्वप्रथम गणेश आदि देवों का पूजन करके यज्ञ आदि के सभी अंतर्भूत कर्मों का संपादन किया जाता था। इसके बाद श्मश्रु-वपन (दाढ़ी बनाने) की क्रिया संपन्न की जाती थी। इसीलिए इसे 'श्मश्रु संस्कार' भी कहते हैं।

१३. समावर्तन संस्कार

यह संस्कार ब्रह्मचर्य के समाप्त होने पर संपन्न किया जाता था तथा विद्यार्थी जीवन की समाप्ति का सूचक था। 'समावर्तन' शब्द का अर्थ है—वेदाध्ययन के अनंतर गुरुकुल से घर की ओर प्रस्थान। इस संस्कार को स्नान भी कहते हैं, क्योंकि यह इस समावर्तन संस्कार का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग था। कुछ आचार्यों के अनुसार स्नान का प्रयोजन विद्यार्थी से दिव्य शक्ति को दूर करना था। अपने ब्रह्मचर्य की अवधि में वह दिव्य संपर्क में निवास करता था तथा उसके चारों ओर दिव्य ज्योति व्याप्त रहती थी। अतः जिस प्रकार एक यज्ञ के अंत में यज्ञ करनेवाला यज्ञीय स्नान अथवा अवभृथ-स्नान करता था, उसी प्रकार ब्रह्मचर्य रूपी दीर्घसत्र के अंत में ब्रह्मचारी का स्नान करना आवश्यक था।

समावर्तन संस्कार में वेद मंत्रों से अभिमंत्रित सुगंध आदि औषधि-युक्त जल से भरे आठ कलशों से वेदी के उत्तर भाग में स्थित स्थान पर विधिपूर्वक ब्रह्मचारी को स्नान कराया जाता था। इसीलिए यह संस्कार वेदस्नान संस्कार भी कहलाता है। इस संस्कार के पश्चात् ब्रह्मचारी मेखला व दंड का त्याग करके दही व तिलप्राशन करके जटा, लोम एवं नख का वपन कराता था। तत्पश्चात् दंतधावन, सुंदर वस्त्र, उपवस्त्र, सुगंधित माला, शिरोवेष्टन अर्थात् पगड़ी, टोपी, दुपट्टा, अलंकार, काजल या अंजन, दर्पण, छाता व उपानह (खड़ाऊँ आदि) पहनता था या उसे पहनाया जाता था। उसे एक सुंदर छड़ी भी दी जाती थी। इन सबके बाद ईश्वर से मंगलमय कामना

करते हुए उसे गुरुकुल से विदा किया जाता था।

१४. विवाह संस्कार

हिंदू संस्कारों में विवाह का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। अधिकांश गृह्य सूत्रों का आरंभ विवाह संस्कार से होता है, क्योंकि यह समस्त गृह्य सूत्रों व संस्कारों का उद्गम या केंद्र है।

वैवाहिक विधि-विधानों के कुछ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रकरण वे हैं, जो इस बात के प्रतीक हैं कि विवाह पति-पत्नी के बीच एक नवीन संबंध को जन्म देता है। वे उन छोटे-छोटे पौधों के समान संबद्ध होते हैं, जो भिन्न-भिन्न स्थानों से उखाड़कर किसी एक स्थान पर लगा दिए गए हों। 'विवाह' मात्र दो व्यक्तियों का शारीरिक संबंध नहीं है, वह तो दो हृदयों या दो आत्माओं का संबंध है।

१५. विवाहाग्नि-परिग्रह संस्कार

विवाह संस्कार में लाजा-होम आदि क्रियाएँ जिस अग्नि में संपन्न की जाती हैं, वह 'आवसथ्य' नामक अग्नि कहलाती है। इसी को विवाहाग्नि भी कहा गया है। इस अग्नि का आहरण तथा इसका परिसम्मूहन आदि क्रियाएँ इस संस्कार में संपन्न होती हैं। विवाह के बाद वर-वधू अपने घर में आने लगते हैं, तब उस स्थापित अग्नि को घर में लाकर किसी पवित्र स्थान में स्थापित करके उसमें प्रतिदिन अपनी कुल परंपरा के अनुसार सायं-प्रातः हवन करना चाहिए। यह नित्य हवन-विधि द्विजाति (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) के लिए आवश्यक बताई गई है और नित्य कर्मों में गिनी गई है।

१६. त्रेताग्नि-संग्रह संस्कार

विवाह के समय घर में लाई गई आवसथ्य अग्नि में स्मार्त कर्म आदि अनुष्ठान किए जाते हैं। उसी स्थापित अग्नि से अतिरिक्त अन्य तीन अग्नियों (दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य तथा आह्वनीय) की स्थापना तथा उनकी रक्षा आदि का विधान भी शास्त्रों में निर्देशित है। ये तीन अग्नियाँ त्रेताग्नि कहलाती हैं, जिनमें श्रौतकर्म संपादित होते हैं।

वर्तमान में आधुनिक जीवन-शैली, आपाधापी, भाग-दौड़ आदि के कारण यह संस्कार बिल्कुल ही लुप्त हो गया है।

□

हिंदू धर्म के कुछ प्रमुख व्रत और पर्व

व्रत का विधि-विधान

व्रत का पालन और संपादन एक अनुशासन के अधीन किया जाता है, जिसके लिए शास्त्रों में विधि-विधान है। महर्षि गर्ग का कथन है कि जब बृहस्पति और शुक्र ग्रह अस्त हो गए हों अर्थात् निकट होने के कारण अदृश्य हों तब व्रत नहीं करना चाहिए और न ही किए हुए व्रत का उद्यापन करना चाहिए। उसी प्रकार मलमास में व्रत नहीं किया जाता। रजस्वला नारी को भी तीन दिनों तक व्रत नहीं करना चाहिए, परंतु यदि व्रत प्रारंभ करने के पश्चात् स्त्री का रजोधर्म प्रारंभ हो जाए तो उनके सामने दोनों विकल्प रहते हैं। वह व्रत समाप्त कर सकती है। वैसे व्रत को करते रहना भी अनुचित नहीं है। देवी पुराण में व्यवस्था है कि गुरु और शुक्र सिंह राशि में हों तो कोई धार्मिक कार्य नहीं करना चाहिए। रत्नमाला के अनुसार, सभी धार्मिक कर्मों के लिए सोम, बुध, बृहस्पति एवं शुक्र होते हैं। मंगल, शनि एवं रविवार अपेक्षाकृत कम फलदायी होते हैं। वराहमिहिर ने तिथियों को पाँच भागों में विभाजित किया है—नंदा, भद्रा, विजया या जया, ऋक्ता एवं पूर्णा। उन्होंने कहा है कि इन तिथियों पर उनके पतियों के योग्य कर्म किए जाने चाहिए, तभी सफलता मिलती है और किए गए कर्म तिथियों के नाम के अनुरूप फल देते हैं। इनके अनुसार तिथियों का विभाजन इस प्रकार है—

१. नंदा—प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी।

२. भद्रा—द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी।

३. विजया—तृतीया, अष्टमी और त्रयोदशी।

४. ऋक्ता—चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी।

५. पूर्णा—पंचमी, दशमी एवं पूर्णिमा।

'गरुड पुराण' के अनुसार, शास्त्रों में वर्णित नियम-पालन 'व्रत' कहलाते हैं और व्रत ही तप है। व्रती के सामान्य नियमों की विवेचना करते हुए पुराणकार ने लिखा है कि उसे तीनों संध्याओं में स्नान, संध्या एवं पूजा-पाठ करके भूमि पर ही सोना चाहिए। उसे यथासंभव पवित्र रहकर दुष्टों, चांडालों, पतितों एवं अधर्मियों से दूर रहना चाहिए। व्रती के लिए कतिपय वर्जनाएँ हैं, जिनका पालन दृढ़तापूर्वक होना चाहिए। दिन में एक से अधिक बार जलपान, तांबूल भक्षण और शयन करने से व्रत भंग हो जाता है। इसके अतिरिक्त काँसे के पात्र, पुष्प, अलंकार, नया वस्त्र, सुगंध का सेवन वर्जित है। अंजन इत्यादि का प्रयोग, अन्न, शाक और मधु का सेवन भी त्याज्य है। सभी व्रतों में सामान्य रूप से दस नियमों का पालन करना आवश्यक है, क्योंकि ये ही व्रत के धर्म हैं। ये दस हैं—धर्मों में क्षमा, सत्य, दया, दान, शौच, इंद्रिय निग्रह, देव पूजा, हवन, संतोष और स्तेय।

व्रत का उद्देश्य

व्रत सदैव आत्मिक होते हैं, क्योंकि 'व्रत' शब्द का तात्पर्य ही 'आत्मशोधन' है। व्रत का प्रयोजन अपने तन-मन से दोष, दुर्गुण, कषाय, कल्मष आदि का निष्कासन कर अपने को किसी उदात्त लक्ष्य हेतु संस्कारित करना होता है। व्रत अंतरंग पर छाई हुई मलिनता की धुंध को हटाने का एक उपक्रम है, जिससे आत्म-ज्योति की आभा उभरती है।

अहिंसा, मौन आदि व्रत भी अनेक दिशाओं में बिखरी हुई शक्तियों को एकत्र करके अभीष्ट दिशा में लगाने के लिए किए जाते हैं। स्वामी रमण का मौन व्रत, जगद्गुरु शंकराचार्य, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, महर्षि दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद आदि का ब्रह्मचर्य व्रत तथा कणाद, पिप्पलाद आदि ऋषियों का आहार-संबंधी सीमा-बंधन व्रत जगत्-प्रसिद्ध हैं।

इसी प्रकार सत्य का व्रत भी एक महत्त्वपूर्ण संकल्प है। यद्यपि सत्य भाषण सदैव ही हितकर एवं प्रिय होना चाहिए, परंतु यदा-कदा सत्य वाचन से किसी दुर्घटना, विपदा अथवा आत्मसम्मान को चोट लगने की संभावना

हो, वहाँ सत्य से परहेज भी किया जा सकता है। इसलिए कहा गया है कि सत्य अवश्य बोलो, परंतु अप्रिय सत्य मत बोलो।

व्रत, पर्व और त्योहार में अंतर

वास्तव में व्रत, पर्व और त्योहार—तीनों को ही किसी स्पष्ट रेखा से विभाजित नहीं किया जा सकता, क्योंकि तीनों का ही परस्पर अंतर्संबंध है। विद्वानों के अनुसार, इन तीनों ही अनुष्ठानों में एक-एक गुण प्रधान और दो-दो आंशिक रूप से मिले हुए हैं। जैसे—व्रत में सात्त्विक गुण प्रधान है, परंतु रज और तम गौण हैं। पर्व में राजस प्रधान है तथा सत्य एवं तम आंशिक हैं। वर्ष के जितने भी पर्व एवं त्योहार हैं, उनको उनमें अंतर्भूत गुणों को दृष्टि में रखकर यह तय किया जा सकता है कि किसे व्रत, पर्व या त्योहार कहा जाए। किसी देव, देवी, पंचदेवी, दशावतार आदि का व्रत करने से सात्त्विक गुण प्रधान होता है। इसलिए यह व्रत है। पर्वतोत्सव में उसकी उपयोगी शोभा सामग्री, गायन-वादन, पूजा-सामग्री, प्रसाद-वितरण, भव्य प्रकाश की व्यवस्था आदि होने के कारण यह राजस गुण प्रधान होगा। होली, दीवाली, दशहरा आदि तामस गुण प्रधान त्योहारों में हँसी-मजाक, जुआ और यहाँ तक कि गाली-गलौज भी हो जाता है, परंतु इनमें से कोई भी निषिद्ध या निंदनीय नहीं होता। इसलिए यह तामस प्रवृत्ति के पर्व हैं और इन्हें 'त्योहार' कहा जाता है। स्थानीय रीति-रिवाज, परंपरा तथा सामाजिक मान्यताओं का ध्यान रखते हुए सभी पर्वों का समयानुकूल मनाया जाना हितकारी होता है। इनके आयोजन से न केवल व्यक्तिगत आमोद-प्रमोद, पूजा-अर्चना, मेल-जोल अथवा भजन-कीर्तन का अवसर मिलता है, वरन् सामाजिक सद्भाव, समरसता, सहयोग आदि की भावनाएँ भी जाग्रत् होती हैं।

व्रत, पर्व एवं त्योहार में एक और विशेष बात यह है कि तीनों लगभग समान पृष्ठभूमि से अपना रस ग्रहण करते हैं और सभी की उत्पत्ति किसी-न-किसी धार्मिक अंतर्कथा की परिणति के फलस्वरूप हुई है। जैसे—होलिका-दहन, प्रह्लाद और होलिका से संबंधित है। इसी प्रकार दशहरे का पर्व रावण पर राम की विजय अथवा सत्य की असत्य पर विजय का पर्व है। जो पर्व, व्रत या त्योहार न होकर उत्सव मात्र होते हैं, उनकी पृष्ठभूमि कुछ और होती है।

इस श्रेणी में राष्ट्रीय पर्वों को लिया जा सकता है, जो उल्लास एवं गीत-संगीत के वातावरण में तो मनाए जाते हैं, परंतु इनका धर्म से कोई लेना-देना नहीं है, इसीलिए इन्हें 'त्योहार' नहीं कहा जाता। 'राष्ट्रीय पर्व' तो 'पर्व' के शाब्दिक अर्थ को देखते हुए कहा गया है, क्योंकि यह निश्चित अवधि पर वर्ष की निश्चित तिथियों पर होते रहते हैं। इनके साथ धार्मिक भाव नहीं है। इस कारण ये जन-जन के पर्व या त्योहार नहीं बन पाए हैं; अभी तक ये सरकारी आयोजन के रूप में ही दृष्टिगोचर होते हैं, जिनमें मुख्य रूप से मंत्रियों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों की भागीदारी देखी जाती है, साधारण जनता का कोई विशेष लेना-देना नहीं होता। जैसा 'व्रत' शब्द की विवेचना में बताया जा चुका है कि इसका अर्थ 'संकल्प' भी होता है। यदि व्रत, पर्व एवं त्योहार को समानार्थी मान लिया जाए तो स्थिति स्पष्ट हो जाती है कि किसी-न-किसी संकल्प, अनुष्ठान या कामना से ही इसका संबंध है। इन सभी उद्देश्यों में धर्म की महती भूमिका होती है, जो राष्ट्रीय पर्वों में नहीं है।

नवरात्र पूजा का विधान

कोई लकड़ी के पटरे पर सिंदूर से देवीजी की तसवीर बनाता है, कोई दीवार पर। अगर तसवीर बनाना संभव नहीं हो तो एक पटरे पर देवीजी का फोटो रख लें। इस पटरे को ऊँचा रखें। इससे नीचे एक पटरे पर सफेद वस्त्र बिछाकर उसपर गणेशजी स्थापित करें। एक जगह चावल की नौ ढेरी और एक जगह लाल रँगे हुए चावलों की सोलह ढेरी बनाएँ। इस प्रकार नव ग्रह और षोड्शमातृका को स्थापित करके गणेश सहित सबकी पूजा करें। कलश की पूजा करके नौ दिन तक रोज देवी की पूजा करें। जल, मौली, रोली, चावल, सिंदूर और गुलाल, प्रसाद, फल, फूलमाला, धूप, दीपक जलाकर आरती करनी चाहिए और नौ दिन तक एक समय ध्वजा, ओढ़नी व दक्षिणा चढ़ाकर मिट्टी के मटके में झाँझरा पहनाएँ। नौ दिन तक देवीजी की पूजा करनी चाहिए। देवीजी के आगे नौ दिन तक रोज ज्योति जलानी चाहिए। पंडित से नौ दिन तक दुर्गा पाठ कराके नौ दिन तक कुँवारी कन्या और ब्राह्मण को खाना खिलाना चाहिए। अष्टमी के दिन देवीजी की कड़ाही करनी चाहिए और हलवा, पूरी व ज्योति जलाकर नौ कुँवारी कन्याओं

को भोजन कराना चाहिए। सबको दक्षिणा दें, कपड़े दें और जो लड़की रोज जीमती है, उसे आठवें दिन साड़ी और ब्लाउज तथा नौ दिन की दक्षिणा देनी चाहिए। सब लड़कियों को टीका लगाकर फेरी देनी चाहिए।

नवरात्रों में अगर कोई कालीजी या देवीजी के दर्शन करने जाएँ तो पूजा की सामग्री साथ ले जाएँ। जल, रोली, चावल, मौली, दही-दूध, चीनी, फल, प्रसाद, चूड़ी, सिंदूर, ध्वजा, धूप-दीपक, नारियल सब सामान लेकर जाएँ तथा दक्षिणा भी चढ़ानी चाहिए।

गनगौर व्रत

यह व्रत चैत्र शुक्ल तृतीया को किया जाता है। इस दिन सधवा स्त्रियाँ व्रत रखती हैं। कहा जाता है इसी दिन भगवान् शंकर ने अपनी अर्द्धांगिनी पार्वती को तथा पार्वती ने तमाम स्त्रियों को सौभाग्य का वर दिया था।

पूजन के समय मिट्टी की गौरी (गौर) बनाकर उसपर चूड़ी, महावर, सिंदूर चढ़ाने का विशेष फल है। चंदन, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य से पूजन करने, सुहाग सामग्री चढ़ाने तथा भोग लगाने का नियम है। यह व्रत रखनेवाली स्त्रियों को गौर पर चढ़े सिंदूर को अपनी माँग में लगाना चाहिए।

दुर्गा अष्टमी व्रत

यह चैत्र मास की शुक्ल पक्ष की अष्टमी को संपन्न किया जाता है। इस दिन पर्वतराज की पुत्री पार्वती ने अवतार लिया था। इस दिन कुमारियाँ तथा सुहागिनें पार्वतीजी की गोबर से निर्मित प्रतिमा का पूजन करती हैं। नवरात्रों के पश्चात् इस दिन दुर्गाजी की प्रतिमाओं का विसर्जन किया है। इसलिए इसे दुर्गाष्टमी भी कहते हैं।

इस पर्व पर नवमी को प्रात:काल देवी का पूजन होता है। पार्वतीजी के निमित्त व्रत करनेवाली महिलाओं को पति सेवा का भाव नहीं भूलना चाहिए।

निर्जला एकादशी व्रत

जेठ सुदी एकादशी (ग्यारस) को निर्जला एकादशी होती है। एकादशी के दिन सबको निर्जला एकादशी का व्रत करना चाहिए। जल भी नहीं पीना

चाहिए। यदि बिना खाए नहीं रहा जाए तो फलाहार लेकर व्रत करें। एकादशी के दिन मटके में जल भरकर उसे ढक्कन से ढक दें और ढक्कन में चीनी व दक्षिणा, फल इत्यादि रख दें। जिस ब्राह्मण को मटका दें, उसी ब्राह्मण को एकादशी के दिन एक-एक सीधा और शरबत दें। मेहँदी लगाकर, नथ पहनकर, ओढ़नी ओढ़कर सबको एकादशी के दिन बायना निकालना चाहिए। एक मिट्टी के मटके में जल भरकर ढक्कन में चीनी, रुपया रखें। बायने के साथ आम रखकर और करवे पर रोली से स्वस्तिक बनाकर ढक्कन से ढक दें, फिर हाथ फेरकर सासूजी के पैर छूकर उन्हें दे दें।

गुरु पूर्णिमा (व्यास पूर्णिमा)

आषाढ मास की पूर्णिमा को गुरु पूर्णिमा या व्यास पूर्णिमा कहते हैं। प्राचीन काल में विद्यार्थी गुरुकुलों में शिक्षा प्राप्त करने जाते थे। छात्र इस दिन श्रद्धा भाव से प्रेरित अपने गुरु का पूजन करके अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा देकर उन्हें प्रसन्न करते थे।

इस दिन पूजा से निवृत्त होकर अपने गुरु के पास जाकर वस्त्र, फल, फूल व माला अर्पण करके उन्हें प्रसन्न करना चाहिए। गुरु का आशीर्वाद कल्याणकारी और ज्ञानवर्धक होता है। चारों वेदों के व्याख्याता व्यास ऋषि थे। हमें वेदों का ज्ञान देनेवाले व्यासजी ही हैं। इसलिए वे हमारे आदिगुरु हुए। उनकी स्मृति को ताजा रखने के लिए हमें अपने-अपने गुरुओं को व्यासजी का ही अंश मानकर उनकी पूजा करनी चाहिए।

मंगलागौरी की पूजा

सावन के प्रत्येक मंगलवार को मंगलागौरी का व्रत कर पूजा करनी चाहिए। पूजा करने सिर सहित स्नान करके बैठना चाहिए। पहले एक पाटे पर लाल और सफेद कपड़ा बिछाएँ। सफेद कपड़े पर चावल की नौ ढेरी बनाकर नौ ग्रह बना दें और लाल कपड़े पर गेहूँ की १६ ढेरी बनाकर षोड्शमातृका बनाएँ और किसी पट्टे पर थोड़ा सा चावल रखकर गणेशजी को बिठाएँ और पट्टे के पास में थोड़ा सा गेहूँ रखकर उसके ऊपर कलश रखें। आटे का चार मुखवाला दीपक बनाकर उसमें रुई की १६-१६ तार की चार बत्ती बनाकर जलाएँ। १६

धूपबत्ती जलाकर पूजा करने से पहले संकल्प लें। सबसे पहले गणेशजी की पूजा करनी चाहिए, फिर जल, पंचामृत, मोली, जनेऊ, चंदन, रोली, सिंदूर, चावल, फूल, बेलपत्र, प्रसाद, फल, पाँच मेवा, पान, सुपारी, लौंग, इलाइची, दक्षिणा, गुलाल आदि चढ़ाकर धूप दीप जलाएँ। फिर कलश की पूजा कर कलश में पानी डाल दें। आम के पाँच पत्ते लगाएँ, एक सुपारी, पंच रत्न लगा दें। थोड़ी सी मिट्टी, दक्षिणा आदि कलश के अंदर डाल दें। फिर कलश पर एक ढक्कन में थोड़ा सा चावल रखकर उसके ऊपर रख दें और थोड़ी सी घास लाल कपड़े में बाँधकर ढक्कन में रख दें। बाद में कलश की पूजा करें। गणेशजी की पूजा करें। उसी तरह कलश की पूजा करें, कलश में सिंदूर, बेलपत्र न चढ़ाएँ। नौ ग्रह की पूजा भी उसी प्रकार करें, जिस प्रकार कलश की पूजा की। षोड्शमातृका की भी पूजा करनी चाहिए। परंतु जनेऊ न चढ़ाएँ और हल्दी, मेहँदी, सिंदूर भी चढ़ाएँ। फिर बाद में मिलाकर देवी-देवता का चढ़ा दें।

बाद में पंडितजी के टीका लगाकर मोली बाँध दें और अपने भी बाँध लें। फिर मंगलागौरी की पूजा कर एक पटरे पर थाली रख, उसके ऊपर चकला रखें। चकले के पास में आटे का सिल-बट्टा बनाकर रखें और चकले के ऊपर गंगाजी की मिट्टी से मंगलागौरी बनाकर रखें। पहले मंगलागौरी को जल, दूध, दही, घी, शहद, चीनी, पंचामृत से नहलाएँ, फिर उसको कपड़े, नथ पहनाएँ। बाद में रोली, चंदन, सिंदूर, हल्दी, चावल, मेहँदी, काजल लगाएँ। १६ माला चढ़ाएँ। आटे के १६ लड्डू, १६ फल, ५ तरह की मेवा, १६ तरह का अनाज, १६-१६ जगह जीरा, १६-१६ धनिया, १६ पान, १६ सुपारी, १६ लौंग, १६ इलाइची, १ सुहाग पिटारी चढ़ाएँ। उसमें ब्लाऊज, रोली, मेहँदी, काजल, सिंदूर, कंघा, शीशा, नाला, १६ चूड़ी में रुपया और अपनी इच्छानुसार दक्षिणा चढ़ाएँ। पीछे कथा सुनें। कथा सुनने के बाद आटे के १६ दीपक बनाकर उसे नाले की १६ तार की १६ बत्ती बनाकर कपूर रखकर आरती कर परिक्रमा दें। बाद में बायना निकाल आटे के १६ लड्डू का सासूजी के पैर छूकर उन्हें दे दें। बाद में खाना खा लें। एक तरह के अनाज की चीज खाएँ। नमक नहीं खाना चाहिए। दूसरे दिन सुबह मंगलागौरी का विसर्जन करने के बाद में खाएँ।

नाग पंचमी

सावन शुक्ल पंचमी को नागपंचमी होती है। चौथ के दिन शाम को मोठ-चने भिगो दें। रात को खाना बनाकर रख दें। दूसरे दिन ठंडी रोटी खाएँ। पहले तो एक रस्सी में सात गाँठ लगाकर साँप बनाएँ। बाद में रस्सी के साँप को पट्टे पर रखकर पूजा करें। जल, कच्चा दूध, बाजरे का आटा, घी, चीनी मिलाकर लड्डू बनाकर चढ़ाएँ। भीगा हुआ मोठ, बाजरा, रोली, चावल तथा दक्षिणा चढ़ाएँ। पाँचे की कहानी सुन फिर मोठ-बाजरे में रुपए रख बायना निकालकर सासूजी के पैर छूकर उन्हें दें। अगर गाँव में अपनी बेटी हो तो उसके भी बायना भेजें और नागपंचमी के दिन अपनी बेटियों को पीहर बुलाएँ।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी व्रत

भाद्रपद कृष्ण पक्ष की अष्टमी को रात के बारह बजे मथुरा के राजा कंस की जेल में वसुदेवजी की पत्नी देवी देवकी के गर्भ से सोलह कलाओं से संपन्न भगवान् श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था। इस तिथि को रोहिणी नक्षत्र का विशेष माहात्म्य है। इस दिन देश के समस्त मंदिरों का शृंगार किया जाता है। कृष्णावतार के उपलक्ष्य में झाँकियाँ सजाई जाती हैं। भगवान् कृष्ण का शृंगार करके झूला सजाया जाता है। स्त्री-पुरुष रात के बारह बजे तक व्रत रखते हैं। रात को बारह बजे शंख तथा घंटों की आवाज से श्रीकृष्ण के जन्म की खबर चारों दिशाओं में गूँज उठती है। भगवान् कृष्ण की आरती उतारी जाती है और प्रसाद वितरण किया जाता है। प्रसाद ग्रहण कर व्रत को खोला जाता है।

हरतालिका तीज व्रत

भाद्रपद शुक्ल तृतीया को यह व्रत किया जाता है। सुहाग चाहनेवाली स्त्रियों को इस दिन शंकर-पार्वती सहित बालू की मूर्ति बनाकर पूजा करनी चाहिए तथा सुंदर वस्त्रों और कदली स्तंभों से घर को सजाकर नाना प्रकार के मंगल-गीतों से रात्रि जागरण करना चाहिए। इस व्रत को करने वाली स्त्रियाँ पार्वती के समान सुखपूर्वक पतिरमण करके शिवलोक को जाती हैं।

महालक्ष्मी व्रत

यह व्रत राधाष्टमी के ही दिन किया जाता है। यह व्रत १६ दिन तक रखते हैं। निम्न मंत्र को पढ़कर संकल्प करें—

करिष्येऽहं महालक्ष्मी व्रतते त्वत्परायणा।
अविघ्नेन मे मातु समाप्तिं त्वत्प्रसादतः॥

हे देवी! मैं आपकी सेवा में तत्पर होकर आपके इस महाव्रत का पालन करूँगी। आपकी कृपा से यह व्रत बिना विघ्नों के पूर्ण हो।

महालक्ष्मी व्रत की कथा

प्राचीन काल में एक गरीब ब्राह्मण एक गाँव में रहता था। यह नियमपूर्वक जंगल में विष्णु के मंदिर में जाकर पूजा किया करता था। उसकी पूजा को देखकर भगवान् ने प्रसन्न होकर उसे साक्षात् दर्शन दिए। भगवान् ने उसे लक्ष्मी प्राप्त करने का उपाय बताया कि मंदिर के सामने एक स्त्री उपले थापने आती है। सुबह आकर तुम उसे पकड़कर अपने घर चलने का आग्रह करना और तब तक न छोड़ना जब तक वह तुम्हारे साथ चलकर रहने को तैयार न हो। वह मेरी स्त्री लक्ष्मी है। उसके तुम्हारे घर आते ही तुम्हारा घर धन-धान्य से पूर्ण हो जाएगा। इतना कहकर भगवान् विष्णु अंतर्धान हो गए और ब्राह्मण अपने घर चला आया।

दूसरे दिन वह सुबह चार बजे ही मंदिर के सामने जाकर बैठ गया। लक्ष्मीजी उपले थापने आईं तो उनको ब्राह्मण ने पकड़ किया और अपने घर चलकर रहने की प्रार्थना करने लगा। लक्ष्मीजी समझ गईं कि यह सब विष्णुजी की करतूत है। तब लक्ष्मीजी बोलीं—तुम अपनी पत्नी सहित मेरा सोलह दिन तक व्रत करो, फिर सोलहवें दिन रात्रि को चंद्रमा की पूजा करो और उत्तर दिशा में मुझे पुकारना। तब तुम्हारा मनोरथ पूरा होगा। ब्राह्मण ने ऐसा ही किया। जब रात्रि को चंद्रमा की पूजा करके उत्तर दिशा में आवाज लगाई तो लक्ष्मीजी ने अपना वचन पूरा किया।

इस प्रकार यह व्रत महालक्ष्मी के नाम से प्रसिद्ध है। हे लक्ष्मीजी! जैसे तुम ब्राह्मण के घर आईं, वैसे सबके घर आना।

शरद् पूर्णिमा व्रत

आश्विन मास की शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा को शरद पूर्णिमा कहते हैं। इसे 'रास पूर्णिमा' भी कहते हैं। ज्योतिष की मान्यता है कि संपूर्ण वर्ष में आश्विन मास की पूर्णिमा का चंद्रमा ही षोड्श कलाओं का होता है। कहते हैं कि इस दिन चंद्रमा अमृत की वर्षा करता है।

शरद पूर्णिमा के दिन शाम को खीर-पूरी बनाकर भगवान् को भोग लगाएँ। भोग लगाकर खीर को छत पर रख दें और रात को भगवान् का भजन करें। चाँद की रोशनी में सुई पिरोएँ। अगले दिन खीर का प्रसाद सबको देना चाहिए।

इस दिन प्रात:काल आराध्य देव को सुंदर वस्त्राभूषणों से सुशोभित करें। आसन पर विराजमान कर गंध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, तांबूल, सुपारी, दक्षिणा आदि से पूजा करनी चाहिए। पूर्णिमा का व्रत करके कहानी सुननी चाहिए। कथा सुनते समय एक लोटे में जल, गिलास में गेहूँ, दोनों में रोली तथा चावल रखें। गेहूँ के १३ दाने हाथ में लेकर कथा सुनें। फिर गेहूँ के गिलास पर हाथ फेरकर गुरु पत्नी के पाँव स्पर्श करके उसे दे दें। लोटे के जल का रात को अर्घ्य दें। विवाहोपरांत पूर्णमासी व्रत करने के लिए शरद पूर्णिमा से ही प्रारंभ करें। कार्तिक का व्रत भी शरद पूर्णिमा से ही आरंभ करना चाहिए।

करवा चौथ व्रत

करवा चौथ का व्रत कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को करते हैं। चार बजे से करीब मिट्टी के करवे पर मौली बाँधकर रोली से एक सतिया बनाकर उस पर रोली से तेरह बिंदियाँ लगाकर चंद्रमा को अर्घ्य देने के लिए जल भरकर रख देते हैं। फिर एक थाली में रोली, गेहूँ के दाने और लोटा भरकर रखते हैं। अपने माथे पर रोली से टिक्की करते हैं। लोटे पर भी मौली बाँधकर सतिया बनाते हैं, फिर हाथ में तेरह गेहूँ के दान लेकर कहानी कहते हैं। कहानी सुनने के बाद कुछ गेहूँ के दाने लोटे में डालते हैं, कुछ साड़ी के पल्ले में बाँध लेते हैं जो कि रात्रि में चाँद को अर्घ्य देते समय हाथ में लेते हैं। लोटे का जल सूरज को देते हैं। एक थाली में फल, मिठाई, चावल भरा हुआ खांड का करवा और रुपए रखकर बायना मिलाकर सासूजी, ननदजी या जिठानी को दिया जाता है। पानी गमले में डाल देते हैं।

करवा चौथ की कथा

एक साहूकार के सात बेटे और एक बेटी थी जो कि सातों भाइयों की लाडली बहन थी। आठों भाई-बहन एक साथ बैठकर खाना खाते थे। कार्तिक की चौथ आने पर बहन ने करवा चौथ का व्रत रखा। जब सातों भाई खाना खाने आए तो उन्होंने बहन को भी खाने के लिए बुलाया तो माँ बोली, ''आज इसका करवा चौथ का व्रत है और जब चाँद निकलेगा तब यह अर्घ्य देकर ही खाना खाएगी।'' तब भाइयों ने जंगल में आग जलाकर छलनी में से चाँद दिखा दिया। बहन भाभियों से बोली कि चलो अर्घ्य दे लो, चाँद निकल आया है। भाभियाँ बोलीं कि ये तेरा चाँद निकला है, हमारा चाँद तो रात को निकलेगा। बहन चाँद को अर्घ्य देकर भाइयों के साथ खाने बैठ गई। पहला टुकड़ा तोड़ा तो बाल निकला, दूसरा टुकड़ा तोड़ा छींक मारी, तीसरा टुकड़ा तोड़ा तो राजा के घर से बुलावा आया कि राजा का लड़का बीमार है, जल्दी भेजो। माँ ने लड़की के पहनने के कपड़े निकालने को तीन बार बक्सा खोला, तीनों बार सफेद कपड़े निकले, तब माँ ने वही कपड़े पहनाकर ससुराल भेज दिया। लड़की की साड़ी के पल्ले में एक सोने का सिक्का बाँधकर माँ ने कहा कि रास्ते में जो भी मिले, सबके पैर पड़ती जाना, जो तुझे सुहाग की आशीष देवे, उसे ही यह सिक्का देकर अपने पल्ले में गाँठ लगा लेना। रास्ते में किसी ने भी पैर पड़ने पर सुहाग की आशीष नहीं दी और सबने यही आशीष दी—ठंडी हो, सब्र करनेवाली हो, सातों भाइयों की बहन हो, अपने भाइयों का सुख देखनेवाली हो।

अब ससुराल के घर पहुँची तो दरवाजे पर छोटी ननद खड़ी मिली। बहन उसके पैर पड़ी तो ननद बोली—सीली हो, सपूती हो, सात बेटों की माँ हो, मेरे भाई को सुख देनेवाली हो। यह आशीष सुनकर उसने सोने का सिक्का ननद को दिया और अपने पल्ले में गाँठ मार ली। अंदर गई तो सासूजी ने कहा कि ''ऊपर कोठरी है, वहाँ जाकर बैठ जा।'' जब वह ऊपर गई तो उसने अंदर जाकर देखा कि उसका पति मर चुका है। अब वह उसे लेकर उसी कोठरी में पड़ी रही और उसकी सेवा करती रही। उसकी सास दासियों के हाथ बची-खुची रोटी भेज देती। इस प्रकार उसे अपने पति की सेवा करते-करते एक

साल बीत गया। करवा चौथ का व्रत आया। सारी पड़ोसनों ने नहा-धोकर करवा चौथ का व्रत रखा। सबने सिर धोकर हाथों में मेहँदी लगाई, चूड़ियाँ पहनीं! वह सब देखती रही। एक पड़ोसन बोली, ''तू भी करवा चौथ का व्रत कर ले।'' तब वह बोली, ''मैं कैसे करूँ?'' तो पड़ोसन बोली, ''चौथ माता की कृपा से सब ठीक हो जाएगा।''

पड़ोसन के कहने से बहू ने भी व्रत रखा। थोड़ी देर के बाद करवे बेचनेवाली आई। बहू ने आवाज लगाई—ए करवेवाली, मेरे को करवे दे जा। करवेवाली कहने लगी, ''मेरी दूसरी बहन आएगी वो तेरे को करवे देगी।'' दूसरी बहन आई। बहू ने आवाज लगाई—ए करवेवाली, मेरे को करवे दे जा। वह बोली, ''मेरी तीसरी बहन आएगी, वो तेरे को करवे देगी।'' इस प्रकार पाँच बहनें आकर चली गईं, पर किसी ने भी करवे नहीं दिए। फिर छठी बहन आई और बोली, ''मेरी सातवीं बहन आएगी, वह तुझे करवा देगी। तू सारे रास्ते में काँटे बिखेरकर रख देना। तब उसके पाँव में काँटा चुभ जाएगा तो वह खूब चिल्लाएगी। तब तू सुई लेकर बैठ जाना और उसका पैर पकड़कर मत छोड़ना और उसके पैर के काँटे निकाल देना। वह तुझे आशीर्वाद देगी तो तुम उससे करवे माँग लेना। तब वह तुझे करवे देकर जाएगी, तब तू उद्यापन करना, जिससे तेरा पति अच्छा हो जाएगा।'' अब उसने वैसा ही किया। सारे रास्ते में काँटे बिछा दिए। जब सातवीं बहन करवे लेकर आई तो पाँव में काँटा चुभने के दर्द से खूब चिल्लाई। तो उसने उसका पैर पकड़कर छोड़ा नहीं और उसका काँटा निकाल दिया। जब उसने आशीर्वाद दिया तब बहू ने उसके पैर पकड़ लिये और बोली कि जब तूने मुझे आशीर्वाद दिया है तो करवे भी देकर जाएगी। उसने कहा, ''तूने तो मुझे ठग लिया।'' यह कहकर चौथ माता ने उसे आँख में से काजल, नाखूनों पर से मेहँदी, माँग से सिंदूर और चितली अँगूठी का छींटा और साथ में करवे भी दे दिए। अब करवे लेकर बहू ने उद्यापन की तैयारी की और व्रत रखा।

इसके बाद राजा का लड़का ठीक हो गया और बोला, ''मैं बहुत सोया।'' वह बोली, ''सोए नहीं, बारह महीने हो गए आपकी सेवा करते-करते। कार्तिक की चौथ माता ने सुहाग दिया है।'' उसका पति बोला कि चौथ माता का उद्यापन

करो। अब उसने चौथ माता की कहानी सुनी, उद्यापन कर खूब सारा चूरमा बनाया और जीमकर वे दोनों चौपड़ खेलने लग गए। इतने में उसकी बाँदी तेल की बनी पूरी–सब्जी लेकर आ गई। दोनों को खेलते देखकर ननद सासू से जाकर बोली, ''महलों में खूब रौनक है। तुम्हारे बहू–बेटे चौपड़ सार खेल रहे हैं।'' इतनी सुनकर सासू देखने आई। दोनों को देखकर बहुत खुश हो गई। बहू ने सासू के पैर दबाए तो सासू बोली, ''बहू सच–सच बता, तूने क्या किया?''

उसने सारा हाल अपनी सासू को बताया तो राजा ने सारे शहर में ढिंढोरा पिटवाया कि अपने पति के जीवन के लिए सब बहनें करवा चौथ व्रत रखें। पहली करवा चौथ को अपने पीहर में जाकर व्रत करें। हे चौथ माता! जैसा राजा के लड़के को जीवन दान दिया वैसा सभी को देना। मेरे पति को भी देना। कहते–सुनते सब परिवार की स्त्रियों को भी सुहाग देना। इसके बाद विनायकजी की कहानी भी कह–सुन लेते हैं।

होई अष्टमी व्रत

कार्तिक के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को होई व्रत करते हैं। जिस वार की बड़ी दीवाली होती है, उसी वार को होई का व्रत करते हैं। पहले दीवार पर होई काढ़ते हैं। फिर दो दोगड़, मोली बाँधकर, रोली से सतिया करके, जल भरकर होई के सामने रखते हैं। दोनों दोगड़ पर ५–५ बताशे व पूड़े तथा ५–५ सिंघाड़े रखते हैं। होई के दोनों सिरों पर आटे से नाले की माला लगाते हैं। बीच में आटे से ही एक रुपया भी चिपका देते हैं। दोनों दोगड़ को चाँदी की माला (स्याहू व मनकोंवाली) पहनाते हैं। दोगड़ के आगे गेहूँ की ढेरी लगाते हैं। ढेरी पर एक तेल का दीपक जलाते हैं। एक लोटा जल भरकर रखते हैं। मोली बाँधकर सतिया करके, अपने माथे पर भी टीका लगाते हैं। फिर होई के आगे बैठकर हाथ में गेहूँ के सात दाने लेकर और कहानी सुनकर गेहूँ से धोक मारते हैं, फिर विनायक बाबा की कहानी भी कहते हैं। तारे देखकर तारों को अर्घ्य देते हैं। १४ पूड़े या गुलगुले या गुलाबजामुन, फल, रुपए रखकर बायना निकालते हैं। पानी गमले में देते हैं। फिर व्रत खोलते हैं।

भैया दूज व्रत

भैया दूज का त्योहार आधे कार्तिक दूज को मनाया जाता है। भैया दूज को बहनें अपने भाइयों को जिमाएँ, अपने हाथों से टीका लगाएँ, नारियल दें। भाई अपनी बहनों को उपहार दें। यदि बहन भाई को अपने हाथ से जिमाए तो भाइयों की उम्र बढ़ती है और जीवन के कष्ट दूर होते हैं।

देव उठनी एकादशी

कार्तिक के शुक्ल पक्ष की एकादशी को 'देव प्रबोधिनी' एकादशी या 'देव उठनी' एकादशी कहते हैं। इस दिन शाम को जमीन को पानी से धोकर खड़िया मिट्टी व गेरू से देवी के चित्र बनाकर सूखने के बाद उन पर एक रुपया, रुई, गुड़, मूली, बैंगन, सिंघाड़े, बेर उस स्थान पर रखकर एक परात से ढक देते हैं। रात्रि में परात बजाकर देव उठने के गीत या बधावा गाते हैं। बधावा गाने के बाद दीपक से परात में बनी काजल सभी लगाते हैं। शेष काजल उठाकर रख लेते हैं। आषाढ शुक्ल एकादशी से शयन किए हुए देव इस कार्तिक शुक्ल एकादशी के दिन उठते हैं और सभी शुभ कार्य विवाह आदि इसी दिन से शुरू हो जाते हैं। यह पूजा उसी स्थान पर करते हैं, जहाँ होली, दीवाली इत्यादि की पूजा करते हैं। कुछ स्त्रियाँ इसी एकादशी के दिन तुलसी और शालिग्राम के विवाह का आयोजन भी करती हैं। तुलसी-शालिग्राम विवाह पूरी धूमधाम से उसी प्रकार किया जाता है, जिस प्रकार सामान्य विवाह। शास्त्रों में ऐसी मान्यता है कि जिन दंपतियों के कन्या नहीं होती, वे तुलसी विवाह करके कन्यादान का पुण्य प्राप्त करते हैं।

तुलसीजी का विवाह

कार्तिक मास की शुक्ल पक्ष की एकादशी को कार्तिक स्नान कर तुलसीजी तथा शालिग्राम का विवाह करते हैं। घर में तुलसीजी हो तो विवाह कर दें और ब्राह्मण से पूछकर चीजें मँगा लें। तुलसीजी का गमला चूने और गेरू से सजा लें। तुलसीजी का विवाह कराएँ, होम कराएँ, फेरी दें। पूजा करें। एक साड़ी से मंडप बनाकर एक ब्लाऊज चढ़ाएँ। मंडप के नीचे तुलसीजी से शालिग्रामजी

का विवाह संस्कार करें। मिठाई भी चढ़ाएँ, दक्षिणा दें। तुलसीजी के ब्लाऊज चढ़ा दें, नथ पहनाएँ, सिंदूर लगाए, मेहँदी चूड़ी पहनाएँ और तुलसीजी के विवाह का गीत गाएँ।

महाशिवरात्रि व्रत

फाल्गुन कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को शिवरात्रि का व्रत आता है। इस दिन शिवजी और पार्वतीजी की पूजा करें। रोली, मौली, चावल, पान, सुपारी, लौंग, इलायची, चंदन, दूध, दही, घी, चीनी, शहद, फल-फूल, कमलगट्टा, धतूरा, बेलपत्र, प्रसाद, दक्षिणा चढ़ाकर धूप दीपक जलाकर रात को जागरण करें। तब ब्राह्मण से पूजा-पाठ करवाएँ। चार बार आरती करें। शिवजी का भोग लगाकर सबको प्रसाद बाँटें।

सोमवार व्रत की विधि

सोमवार का व्रत साधारणतया दिन के तीसरे पहर तक होता है। व्रत में फलाहार या पारायण का कोई खास नियम नहीं है, किंतु यह आवश्यक है कि दिन-रात में केवल एक समय भोजन करें। सोमवार के व्रत में शिवजी-पार्वती का पूजन करना चाहिए। सोमवार के व्रत तीन प्रकार के हैं—साधारण प्रति सोमवार, सौम्य प्रदोष और सोलह सोमवार। विधि तीनों की एक जैसी है। शिव पूजन के पश्चात् कथा सुननी चाहिए।

मंगलवार व्रत की विधि

सर्व सुख, रक्त विकार से मुक्ति, राज्य से सम्मान तथा पुत्र की प्राप्ति के लिए मंगलवार का व्रत उत्तम है। इस व्रत में गेहूँ और गुड़ का ही भोजन करना चाहिए। भोजन दिन-रात में एक बार ही ग्रहण करना ठीक है। व्रत इक्कीस सप्ताह तक करें। मंगलवार के व्रत से मनुष्य के समस्त दोष नष्ट हो जाते हैं। व्रत के पूजन के समय लाल पुष्प चढ़ाएँ और लाल वस्त्र धारण करें। अंत में हनुमानजी की पूजा करनी चाहिए तथा मंगलवार की कथा सुननी चाहिए।

बृहस्पतिवार व्रत की विधि

इस दिन बृहस्पतीश्वर महादेवजी की पूजा होती है। दिन में एक समय ही भोजन करें। पीले वस्त्र धारण करें, पीले पुष्प धारण करें। भोजन भी चने की दाल का होना चाहिए, नमक नहीं खाना चाहिए। पीले रंग का फूल, चने की दाल, पीले कपड़े तथा पीले चंदन से पूजा करनी चाहिए। पूजन के पश्चात् कथा सुननी चाहिए। इस व्रत के करने से बृहस्पतिजी अति प्रसन्न होते हैं तथा धन और विद्या का लाभ होता है। स्त्रियों के लिए यह व्रत अति आवश्यक है। इस व्रत में केले को पूजन होता है।

शुक्रवार व्रत की विधि

इस व्रत को करनेवाला कथा कहते व सुनते समय हाथ में गुड़ व भुने चने रखे। सुननेवाला संतोषी माता की जय! संतोषी माता की जय! इस प्रकार जय-जयकार मुख से बोलता जाए। कथा समाप्त होने पर हाथ से गुड़-चना गौ माता को खिलाएँ। कलश में रखा हुआ जल, गुड़-चना सबको प्रसाद के रूप में बाँट दें। कथा से पहले कलश को जल से भरें, उसके ऊपर गुड़-चने से भरा कटोरा रखें, कथा समाप्त होने पर आरती होने के बाद कलश के जल को घर में सब जगहों पर छिड़कें और बचा हुआ पानी तुलसी की क्यारी में डाल दें। सवा रुपए का गुड़-चना लेकर संतोषी माता का व्रत करें। गुड़ घर में हो तो ठीक। श्रद्धा और प्रेम से प्रसन्न मन व्रत करना चाहिए। व्रत के उद्यापन में अढ़ाई-सेर खाजा मोमनदार पूड़ी, खीर, चने का शाक, नैवेद्य रखें। घी का दीपक जला संतोषी माता की जय-जयकार बोल नारियल फोड़ें। इस दिन घर में कोई खटाई न खाएँ और न आप खाएँ, न किसी दूसरे को दें। इस दिन आठ लड़कों को भोजन कराएँ। देवर, जेठ, घर-कुटुंब के लड़कें मिलते हों तो दूसरों को बुलाना नहीं, अन्यथा दूसरों को बुला लें। उन्हें खटाई की कोई वस्तु न दें तथा भोजन कराकर यथाशक्ति दक्षिणा दें।

□

।। श्रीगणेशाय नमः।।

सुंदरकांड

श्लोक

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़ामणिम्।।१।।

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये
सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च।।२।।

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि।।३।।

चौपाई

जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई। सहि दुख कंद मूल फल खाई।।१।।
जब लगि आवौं सीतहि देखी। होइहि काजु मोहि हरष बिसेषी।।
यह कहि नाइ सबन्हि कहुँ माथा। चलेउ हरषि हियँ धरि रघुनाथा।।२।।
सिंधु तीर एक भूधर सुंदर। कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर।।
बार बार रघुबीर सँभारी। तरकेउ पवनतनय बल भारी।।३।।
जेहिं गिरि चरन देइ हनुमंता। चलेउ सो गा पाताल तुरंता।।
जिमि अमोघ रघुपति कर बाना। एही भाँति चलेउ हनुमाना।।४।।
जलनिधि रघुपति दूत बिचारी। तैं मैनाक होहि श्रमहारी।।५।।

दोहा

हनूमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम।
राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम।।१।।

चौपाई

जात पवनसुत देवन्ह देखा। जानैं कहुँ बल बुद्धि बिसेषा।।
सुरसा नाम अहिन्ह कै माता। पठइन्हि आइ कही तेहिं बाता।।१।।
आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा। सुनत बचन कह पवनकुमारा।।
राम काजु करि फिरि मैं आवौं। सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौं।।२।।
तब तव बदन पैठिहउँ आई। सत्य कहउँ मोहि जान दे माई।।
कवनेहुँ जतन देइ नहिं जाना। ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना।।३।।
जोजन भरि तेहिं बदनु पसारा। कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा।।
सोरह जोजन मुख तेहिं ठयऊ। तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ।।४।।
जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा। तासु दून कपि रूप देखावा।।
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा। अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा।।५।।
बदन पइठि पुनि बाहेर आवा। मागा बिदा ताहि सिरु नावा।।
मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा। बुधि बल मरमु तोर मैं पावा।।६।।

दोहा

राम काजु सबु करिहहु तम्ह बल बुद्धि निधान।
आसिष देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान।।२।।

चौपाई

निसिचरि एक सिंधु महुँ रहई। करि माया नभु के खग गहई।।
जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं। जल बिलोकि तिन्ह कै परिछाहीं।।१।।
गहइ छाहँ सक सो न उड़ाई। एहि बिधि सदा गगनचर खाई।।
सोइ छल हनूमान कहँ कीन्हा। तासु कपटु कपि तुरतहिं चीन्हा।।२।।
ताहि मारि मारुतसुत बीरा। बारिधि पार गयउ मतिधीरा।।
तहाँ जाइ देखी बन सोभा। गुंजत चंचरीक मधु लोभा।।३।।
नाना तरु फल फूल सुहाए। खग मृग बृंद देखि मन भाए।।
सैल बिसाल देखि एक आगें। ता पर धाइ चढ़ेउ भय त्यागें।।४।।
उमा न कछु कपि कै अधिकाई। प्रभु प्रताप जो कालहि खाई।।
गिरि पर चढ़ि लंका तेहिं देखी। कहि न जाइ अति दुर्ग बिसेषी।।५।।
अति उतंग जलनिधि चहु पासा। कनक कोट कर परम प्रकासा।।६।।

छंद

कनक कोट बिचित्र मनि कृत सुंदरायतना घना।
चउहट्ट हट्ट सुबट्ट बीथीं चारु पुर बहु बिधि बना।।
गज बाजि खच्चर निकर पदचर रथ बरूथन्हि को गनै।
बहुरूप निसिचर जूथ अतिबल सेन बरनत नहिं बनै।।१।।
बन बाग उपबन बाटिका सर कूप बापीं सोहहीं।
नर नाग सुर गंधर्ब कन्या रूप मुनि मन मोहहीं।।
कहुँ माल देह बिसाल सैल समान अतिबल गर्जहीं।
नाना अखारेन्ह भिरहिं बहु बिधि एक एकन्ह तर्जहीं।।२।।
करि जतन भट कोटिन्ह बिकट तन नगर चहुँ दिसि रच्छहीं।
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं।।
एहि लागि तुलसीदास इन्ह की कथा कछु एक है कही।
रघुबीर सर तीरथ सरीरन्हि त्यागि गति पैहहिं सही।।३।।

दोहा

पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघु रूप धरौं निसि नगर करौं पइसार।।३।।

चौपाई

मसक समान रूप कपि धरी। लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी।।
नाम लंकिनी एक निसिचरी। सो कह चलेसि मोहि निंदरी।।१।।
जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा। मोर अहार जहाँ लगि चोरा।।
मुठिका एक महा कपि हनी। रुधिर बमत धरनीं ढनमनी।।२।।
पुनि संभारि उठी सो लंका। जोरि पानि कर बिनय ससंका।।
जब रावनहि ब्रह्म बर दीन्हा। चलत बिरंचि कहा मोहि चीन्हा।।३।।
बिकल होसि तैं कपि कें मारे। तब जानेसु निसिचर संघारे।।
तात मोर अति पुन्य बहूता। देखेउँ नयन राम कर दूता।।४।।

दोहा

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग।।४।।

चौपाई

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।।
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।।१।।
गरुड़ सुमेरु रेनु सम ताही। राम कृपा करि चितवा जाही।।
अति लघु रूप धरेउ हनुमाना। पैठा नगर सुमिरि भगवाना।।२।।
मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा। देखे जहँ तहँ अगनित जोधा।।
गयउ दसानन मंदिर माहीं। अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं।।३।।
सयन किएँ देखा कपि तेही। मंदिर महुँ न दीखि बैदेही।।
भवन एक पुनि दीख सुहावा। हरि मंदिर तहँ भिन्न बनावा।।४।।

दोहा

रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसिका बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ।।५।।

चौपाई

लंका निसिचर निकर निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा।।
मन महुँ तरक करैं कपि लागा। तेहीं समय बिभीषनु जागा।।१।।
राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा। हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा।।
एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी। साधु ते होइ न कारज हानी।।२।।
बिप्र रूप धरि बचन सुनाए। सुनत बिभीषन उठि तहँ आए।।
करि प्रनाम पूँछी कुसलाई। बिप्र कहहु निज कथा बुझाई।।३।।
की तुम्ह हरि दासन्ह महँ कोई। मोरें हृदय प्रीति अति होई।।
की तुम्ह रामु दीन अनुरागी। आयहु मोहि करन बड़भागी।।४।।

दोहा

तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम।
सुनत जुगल तन पुलक मन मगन सुमिरि गुन ग्राम।।६।।

चौपाई

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी। जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी।।
तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा। करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा।।१।।
तामस तनु कछु साधन नाहीं। प्रीति न पद सरोज मन माहीं।।
अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं संता।।२।।
जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा। तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा।।
सुनहु बिभीषन प्रभु कै रीती। करहिं सदा सेवक पर प्रीती।।३।।
कहहु कवन मैं परम कुलीना। कपि चंचल सबहीं बिधि हीना।।
प्रात लेइ जो नाम हमारा। तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा।।४।।

दोहा

अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर।।७।।

चौपाई

जानतहूँ अस स्वामि बिसारी। फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी।।
एहि बिधि कहत राम गुन ग्रामा। पावा अनिर्बाच्य बिश्रामा।।१।।

पुनि सब कथा बिभीषन कही। जेहि बिधि जनकसुता तहँ रही।।
तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता। देखी चहउँ जानकी माता।।२।।
जुगुति बिभीषन सकल सुनाई। चलेउ पवनसुत बिदा कराई।।
करि सोइ रूप गयउ पुनि तहवाँ। बन असोक सीता रह जहवाँ।।३।।
देखि मनहि महुँ कीन्ह प्रनामा। बैठेहिं बीति जात निसि जामा।।
कृस तनु सीस जटा एक बेनी। जपति हृदयँ रघुपति गुन श्रेनी।।४।।

दोहा

निज पद नयन दिएँ मन राम पद कमल लीन।
परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन।।८।।

चौपाई

तरु पल्लव महुँ रहा लुकाई। करइ बिचार करौं का भाई।।
तेहि अवसर रावनु तहँ आवा। संग नारि बहु किएँ बनावा।।१।।
बहु बिधि खल सीतहि समुझावा। साम दान भय भेद देखावा।।
कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी। मंदोदरी आदि सब रानी।।२।।
तव अनुचरीं करउँ पन मोरा। एक बार बिलोकु मम ओरा।
तृन धरि ओट कहति बैदेही। सुमिरि अवधपति परम सनेही।।३।।
सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा। कबहुँ कि नलिनी करइ बिकासा।।
अस मन समुझु कहति जानकी। खल सुधि नहिं रघुबीर बान की।।४।।
सठ सूनें हरि आनेहि मोही। अधम निलज्ज लाज नहिं तोही।।५।।

दोहा

आपुहि सुनि खद्योत सम रामहि भानु समान।
परुष बचन सुनि काढ़ि असि बोला अति खिसिआन।।९।।

चौपाई

सीता तैं मम कृत अपमाना। कटिहउँ तव सिर कठिन कृपाना।।
नाहिं त सपदि मानु मम बानी। सुमुखि होति न त जीवन हानी।।१।।
स्याम सरोज दाम सम सुंदर। प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर।।
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा। सुनु सठ अस प्रवान पन मोरा।।२।।

चंद्रहास हरु मम परितापं। रघुपति बिरह अनल संजातं।।
सीतल निसित बहसि बर धारा। कह सीता हरु मम दुख भारा।।३।।
सुनत बचन पुनि मारन धावा। मयतनयाँ कहि नीति बुझावा।।
कहेसि सकल निसिचरिन्ह बोलाई। सीतहि बहु बिधि त्रासहु जाई।।४।।
मास दिवस महुँ कहा न माना। तौ मैं मारबि काढ़ि कृपाना।।५।।

दोहा

भवन गयउ दसकंधर इहाँ पिसाचिनि बृंद।
सीतहि त्रास देखावहिं धरहिं रूप बहु मंद।।१०।।

चौपाई

त्रिजटा नाम राच्छसी एका। राम चरन रति निपुन बिबेका।।
सबन्हौ बोलि सुनाएसि सपना। सीतहि सेइ करहु हित अपना।।१।।
सपनें बानर लंका जारी। जातुधान सेना सब मारी।।
खर आरूढ़ नगन दससीसा। मुंड़ित सिर खंड़ित भुज बीसा।।२।।
एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई। लंका मनहुँ बिभीषन पाई।।
नगर फिरी रघुबीर दोहाई। तब प्रभु सीता बोलि पठाई।।३।।
यह सपना मैं कहउँ पुकारी। होइहि सत्य गएँ दिन चारी।।
तासु बचन सुनि ते सब ड़रीं। जनकसुता के चरनन्हि परीं।।४।।

दोहा

जहँ तहँ गईं सकल तब सीता कर मन सोच।
मास दिवस बीतें मोहि मारिहि निसिचर पोच।।११।।

चौपाई

त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी। मातु बिपति संगिनि तैं मोरी।।
तजौं देह करु बेगि उपाई। दुसह बिरहु अब नहिं सहि जाई।।१।।
आनि काठ रचु चिता बनाई। मातु अनल पुनि देहि लगाई।।
सत्य करहि मम प्रीति सयानी। सुनै को श्रवन सूल सम बानी।।२।।
सुनत बचन पद गहि समुझाएसि। प्रभु प्रताप बल सुजसु सुनाएसि।।
निसि न अनल मिल सुनु सुकुमारी। अस कहि सो निज भवन सिधारी।।३।।

कह सीता बिधि भा प्रतिकूला। मिलिहि न पावक मिटिहि न सूला।।
देखिअत प्रगट गगन अंगारा। अवनि न आवत एकउ तारा।।४।।
पावकमय ससि स्रवत न आगी। मानहुँ मोहि जानि हत भागी।।
सुनहि बिनय मम बिटप असोका। सत्य नाम करु हरु मम सोका।।५।।
नूतन किसलय अनल समाना। देहि अगिनि जनि करहि निदाना।।
देखि परम बिरहाकुल सीता। सो छन कपिहि कलप सम बीता।।६।।

सोरठा

कपि करि हृदयँ बिचार दीन्हि मुद्रिका ड़ारि तब।
जनु असोक अंगार दीन्ह हरषि उठि कर गहेउ।।१२।।

चौपाई

तब देखी मुद्रिका मनोहर। राम नाम अंकित अति सुंदर।।
चकित चितव मुदरी पहिचानी। हरष बिषाद हृदयँ अकुलानी।।१।।
जीति को सकइ अजय रघुराई। माया तें असि रचि नहिं जाई।।
सीता मन बिचार कर नाना। मधुर बचन बोलेउ हनुमाना।।२।।
रामचंद्र गुन बरनैं लागा। सुनतहिं सीता कर दुख भागा।।
लागीं सुनैं श्रवन मन लाई। आदिहु तें सब कथा सुनाई।।३।।
श्रवनामृत जेहिं कथा सुहाई। कही सो प्रगट होति किन भाई।।
तब हनुमंत निकट चलि गयऊ। फिरि बैठीं मन बिसमय भयऊ।।४।।
राम दूत मैं मातु जानकी। सत्य सपथ करुनानिधान की।।
यह मुद्रिका मातु मैं आनी। दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिदानी।।५।।
नर बानरहि संग कहु कैसें। कही कथा भइ संगति जैसें।।६।।

दोहा

कपि के बचन सप्रेम सुनि उपजा मन बिस्वास।
जाना मन क्रम बचन यह कृपासिंधु कर दास।।१३।।

चौपाई

हरिजन जानि प्रीति अति गाढ़ी। सजल नयन पुलकावलि बाढ़ी।।
बूड़त बिरह जलधि हनुमाना। भयहु तात मो कहुँ जल जाना।।१।।

अब कहु कुसल जाउँ बलिहारी। अनुज सहित सुख भवन खरारी।।
कोमलचित कृपाल रघुराई। कपि केहि हेतु धरी निठुराई।।२।।
सहज बानि सेवक सुख दायक। कबहुँक सुरति करत रघुनायक।।
कबहुँ नयन मम सीतल ताता। होइहहिं निरखि स्याम मृदु गाता।।३।।
बचनु न आव नयन भरे बारी। अहह नाथ हौं निपट बिसारी।।
देखि परम बिरहाकुल सीता। बोला कपि मृदु बचन बिनीता।।४।।
मातु कुसल प्रभु अनुज समेता। तव दुख दुखी सुकृपा निकेता।।
जनि जननी मानहु जियँ ऊना। तुम्ह ते प्रेमु राम कें दूना।।५।।

दोहा

रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गदगद भयउ भरे बिलोचन नीर।।१४।।

चौपाई

कहेउ राम बियोग तव सीता। मो कहुँ सकल भए बिपरीता।।
नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू। काल निसा सम निसि ससि भानू।।१।।
कुबलय बिपिन कुंत बन सरिसा। बारिद तपत तेल जनु बरिसा।।
जे हित रहे करत तेइ पीरा। उरग स्वास सम त्रिबिध समीरा।।२।।
कहेहू तें कछु दुख घटि होई। काहि कहौं यह जान न कोई।।
तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा।।३।।
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं।।
प्रभु संदेसु सुनत बैदेही। मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही।।४।।
कह कपि हृदयँ धीर धरु माता। सुमिरु राम सेवक सुखदाता।।
उर आनहु रघुपति प्रभुताई। सुनि मम बचन तजहु कदराई।।५।।

दोहा

निसिचर निकर पतंग सम रघुपति बान कृसानु।
जननी हृदयँ धीर धरु जरे निसाचर जानु।।१५।।

चौपाई

जौं रघुबीर होति सुधि पाई। करते नहिं बिलंबु रघुराई।।
राम बान रबि उएँ जानकी। तम बरूथ कहँ जातुधान की।।१।।

अबहिं मातु मैं जाउँ लवाई। प्रभु आयसु नहिं राम दोहाई।।
कछुक दिवस जननी धरु धीरा। कपिन्ह सहित अइहहिं रघुबीरा।।२।।
निसिचर मारि तोहि लै जैहहिं। तिहुँ पुर नारदादि जसु गैहहिं।।
हैं सुत कपि सब तुम्हहि समाना। जातुधान अति भट बलवाना।।३।।
मोरें हृदय परम संदेहा। सुनि कपि प्रगट कीन्हि निज देहा।।
कनक भूधराकार सरीरा। समर भयंकर अतिबल बीरा।।४।।
सीता मन भरोस तब भयऊ। पुनि लघु रूप पवनसुत लयऊ।।५।।

दोहा

सुनु माता साखामृग नहिं बल बुद्धि बिसाल।
प्रभु प्रताप तें गरुड़हि खाइ परम लघु ब्याल।।१६।।

चौपाई

मन संतोष सुनत कपि बानी। भगति प्रताप तेज बल सानी।।
आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना। होहु तात बल सील निधाना।।१।।
अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।।
करहुँ कृपा प्रभु अस सुनि काना। निर्भर प्रेम मगन हनुमाना।।२।।
बार बार नाएसि पद सीसा। बोला बचन जोरि कर कीसा।।
अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता। आसिष तव अमोघ बिख्याता।।३।।
सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा। लागि देखि सुंदर फल रूखा।।
सुनु सुत करहिं बिपिन रखवारी। परम सुभट रजनीचर भारी।।४।।
तिन्ह कर भय माता मोहि नाहीं। जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं।।५।।

दोहा

देखि बुद्धि बल निपुन कपि कहेउ जानकीं जाहु।
रघुपति चरन हृदयँ धरि तात मधुर फल खाहु।।१७।।

चौपाई

चलेउ नाइ सिरु पैठेउ बागा। फल खाएसि तरु तोरैं लागा।।
रहे तहाँ बहु भट रखवारे। कछु मारेसि कछु जाइ पुकारे।।१।।

नाथ एक आवा कपि भारी। तेहिं असोक बाटिका उजारी।।
खाएसि फल अरु बिटप उपारे। रच्छक मर्दि मर्दि महि ड़ारे।।२।।
सुनि रावन पठए भट नाना। तिन्हहि देखि गर्जेउ हनुमाना।।
सब रजनीचर कपि संघारे। गए पुकारत कछु अधमारे।।३।।
पुनि पठयउ तेहिं अच्छकुमारा। चला संग लै सुभट अपारा।।
आवत देखि बिटप गहि तर्जा। ताहि निपाति महाधुनि गर्जा।।४।।

दोहा

कछु मारेसि कछु मर्देसि कछु मिलएसि धरि धूरि।
कछु पुनि जाइ पुकारे प्रभु मर्कट बल भूरि।।१८।।

चौपाई

सुनि सुत बध लंकेस रिसाना। पठएसि मेघनाद बलवाना।।
मारसि जनि सुत बाँधेसु ताही। देखिअ कपिहि कहाँ कर आही।।१।।
चला इंद्रजित अतुलित जोधा। बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा।।
कपि देखा दारुन भट आवा। कटकटाइ गर्जा अरु धावा।।२।।
अति बिसाल तरु एक उपारा। बिरथ कीन्ह लंकेस कुमारा।।
रहे महाभट ताके संगा। गहि गहि कपि मर्दइ निज अंगा।।३।।
तिन्हहि निपाति ताहि सन बाजा। भिरे जुगल मानहुँ गजराजा।।
मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई। ताहि एक छन मुरुछा आई।।४।।
उठि बहोरि कीन्हिसि बहु माया। जीति न जाइ प्रभंजन जाया।।५।।

दोहा

ब्रह्म अस्त्र तेहिं साँधा कपि मन कीन्ह बिचार।
जौं न ब्रह्मसर मानउँ महिमा मिटइ अपार।।१९।।

चौपाई

ब्रह्मबान कपि कहुँ तेहिं मारा। परतिहुँ बार कटकु संघारा।।
तेहिं देखा कपि मुरुछित भयऊ। नागपास बाँधेसि लै गयऊ।।१।।
जासु नाम जपि सुनहु भवानी। भव बंधन काटहिं नर ग्यानी।।
तासु दूत कि बंध तरु आवा। प्रभु कारज लगि कपिहिं बँधावा।।२।।

कपि बंधन सुनि निसिचर धाए। कौतुक लागि सभाँ सब आए।।
दसमुख सभा दीखि कपि जाई। कहि न जाइ कछु अति प्रभुताई।।३।।
कर जोरें सुर दिसिप बिनीता। भृकुटि बिलोकत सकल सभीता।।
देखि प्रताप न कपि मन संका। जिमि अहिगन महुँ गरुड़ असंका।।४।।

दोहा

कपिहि बिलोकि दसानन बिहसा कहि दुर्बाद।
सुत बध सुरति कीन्हि पुनि उपजा हृदयँ बिषाद।।२०।।

चौपाई

कह लंकेस कवन तैं कीसा। केहि कें बल घालेहि बन खीसा।।
की धौं श्रवन सुनेहि नहिं मोही। देखउँ अति असंक सठ तोही।।१।।
मारे निसिचर केहिं अपराधा। कहु सठ तोहि न प्रान कइ बाधा।।
सुनु रावन ब्रह्मांड़ निकाया। पाइ जासु बल बिरचति माया।।२।।
जाकें बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा।।
जा बल सीस धरत सहसानन। अंड़कोस समेत गिरि कानन।।३।।
धरइ जो बिबिध देह सुरत्राता। तुम्ह से सठन्ह सिखावनु दाता।।
हर कोदंड़ कठिन जेहिं भंजा। तेहि समेत नृप दल मद गंजा।।४।।
खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली। बधे सकल अतुलित बलसाली।।५।।

दोहा

जाके बल लवलेस तें जितेहु चराचर झारि।
तासु दूत मैं जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि।।२१।।

चौपाई

जानउँ मैं तुम्हारि प्रभुताई। सहसबाहु सन परी लराई।।
समर बालि सन करि जसु पावा। सुनि कपि बचन बिहसि बिहरावा।।१।।
खायउँ फल प्रभु लागी भूँखा। कपि सुभाव तें तोरेउँ रूखा।।
सब कें देह परम प्रिय स्वामी। मारहिं मोहि कुमारग गामी।।२।।
जिन्ह मोहि मारा ते मैं मारे। तेहि पर बाँधेउँ तनयँ तुम्हारे।।
मोहि न कछु बाँधे कइ लाजा। कीन्ह चहउँ निज प्रभु कर काजा।।३।।

बिनती करउँ जोरि कर रावन। सुनहु मान तजि मोर सिखावन।।
देखहु तुम्ह निज कुलहि बिचारी। भ्रम तजि भजहु भगत भय हारी।।४।।
जाकें ड़र अति काल ड़ेराई। जो सुर असुर चराचर खाई।।
तासों बयरु कबहुँ नहिं कीजै। मोरे कहें जानकी दीजै।।५।।

दोहा

प्रनतपाल रघुनायक करुना सिंधु खरारि।
गएँ सरन प्रभु राखिहैं तव अपराध बिसारि।।२२।।

चौपाई

राम चरन पंकज उर धरहू। लंका अचल राजु तुम्ह करहू।।
रिषि पुलस्ति जसु बिमल मयंका। तेहि ससि महुँ जनि होहु कलंका।।१।।
राम नाम बिनु गिरा न सोहा। देखु बिचारि त्यागि मद मोहा।।
बसन हीन नहिं सोह सुरारी। सब भूषन भूषित बर नारी।।२।।
राम बिमुख संपति प्रभुताई। जाइ रही पाई बिनु पाई।।
सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं। बरषि गएँ पुनि तबहिं सुखाहीं।।३।।
सुनु दसकंठ कहउँ पन रोपी। बिमुख राम त्राता नहिं कोपी।।
संकर सहस बिष्नु अज तोही। सकहिं न राखि राम कर द्रोही।।४।।

दोहा

मोहमूल बहु सूल प्रद त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक कृपा सिंधु भगवान।।२३।।

चौपाई

जदपि कही कपि अति हित बानी। भगति बिबेक बिरति नय सानी।।
बोला बिहसि महा अभिमानी। मिला हमहि कपि गुर बड़ ग्यानी।।१।।
मृत्यु निकट आई खल तोही। लागेसि अधम सिखावन मोही।।
उलटा होइहि कह हनुमाना। मतिभ्रम तोर प्रगट मैं जाना।।२।।
सुनि कपि बचन बहुत खिसिआना। बेगि न हरहु मूढ़ कर प्राना।।
सुनत निसाचर मारन धाए। सचिवन्ह सहित बिभीषनु आए।।३।।

नाइ सीस करि बिनय बहूता। नीति बिरोध न मारिअ दूता।।
आन दंड़ कछु करिअ गोसाँई। सबहीं कहा मंत्र भल भाई।।४।।
सुनत बिहसि बोला दसकंधर। अंग भंग करि पठइअ बंदर।।५।।

दोहा

कपि कें ममता पूँछ पर सबहि कहउँ समुझाइ।
तेल बोरि पट बाँधि पुनि पावक देहु लगाइ।।२४।।

चौपाई

पूँछ हीन बानर तहँ जाइहि। तब सठ निज नाथहि लइ आइहि।।
जिन्ह कै कीन्हिसि बहुत बड़ाई। देखउँ मैं तिन्ह कै प्रभुताई।।१।।
बचन सुनत कपि मन मुसुकाना। भइ सहाय सारद मैं जाना।।
जातुधान सुनि रावन बचना। लागे रचैं मूढ़ सोइ रचना।।२।।
रहा न नगर बसन घृत तेला। बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि खेला।।
कौतुक कहँ आए पुरबासी। मारहिं चरन करहिं बहु हाँसी।।३।।
बाजहिं ढोल देहिं सब तारी। नगर फेरि पुनि पूँछ प्रजारी।।
पावक जरत देखि हनुमंता। भयउ परम लघुरूप तुरंता।।४।।
निबुकि चढ़ेउ कपि कनक अटारीं। भईं सभीत निसाचर नारीं।।५।।

दोहा

हरि प्रेरित तेहि अवसर चले मरुत उनचास।
अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास।।२५।।

चौपाई

देह बिसाल परम हरुआई। मंदिर तें मंदिर चढ़ धाई।।
जरइ नगर भा लोग बिहाला। झपट लपट बहु कोटि कराला।।१।।
तात मातु हा सुनिअ पुकारा। एहिं अवसर को हमहि उबारा।।
हम जो कहा यह कपि नहिं होई। बानर रूप धरें सुर कोई।।२।।
साधु अवग्या कर फलु ऐसा। जरइ नगर अनाथ कर जैसा।।
जारा नगरु निमिष एक माहीं। एक बिभीषन कर गृह नाहीं।।३।।

ता कर दूत अनल जेहिं सिरिजा। जरा न सो तेहि कारन गिरिजा।।
उलटि पलटि लंका सब जारी। कूदि परा पुनि सिंधु मझारी।।४।।

दोहा

पूँछ बुझाइ खोइ श्रम धरि लघु रूप बहोरि।
जनकसुता कें आगें ठाढ़ भयउ कर जोरि।।२६।।

चौपाई

मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा। जैसें रघुनायक मोहि दीन्हा।।
चूड़ामनि उतारि तब दयऊ। हरष समेत पवनसुत लयऊ।।१।।
कहेहु तात अस मोर प्रनामा। सब प्रकार प्रभु पूरनकामा।।
दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।।२।।
तात सक्रसुत कथा सुनाएहु। बान प्रताप प्रभुहि समुझाएहु।।
मास दिवस महुँ नाथु न आवा। तौ पुनि मोहि जिअत नहिं पावा।।३।।
कहु कपि केहि बिधि राखौं प्राना। तुम्हहू तात कहत अब जाना।।
तोहि देखि सीतलि भइ छाती। पुनि मो कहुँ सोइ दिनु सो राती।।४।।

दोहा

जनकसुतहि समुझाइ करि बहु बिधि धीरजु दीन्ह।
चरन कमल सिरु नाइ कपि गवनु राम पहिं कीन्ह।।२७।।

चौपाई

चलत महाधुनि गर्जेसि भारी। गर्भ स्रवहिं सुनि निसिचर नारी।।
नाघि सिंधु एहि पारहि आवा। सबद किलिकिला कपिन्ह सुनावा।।१।।
हरषे सब बिलोकि हनुमाना। नूतन जन्म कपिन्ह तब जाना।।
मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा। कीन्हेसि रामचंद्र कर काजा।।२।।
मिले सकल अति भए सुखारी। तलफत मीन पाव जिमि बारी।।
चले हरषि रघुनायक पासा। पूँछत कहत नवल इतिहासा।।३।।
तब मधुबन भीतर सब आए। अंगद संमत मधु फल खाए।।
रखवारे जब बरजन लागे। मुष्टि प्रहार हनत सब भागे।।४।।

दोहा

जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुबराज।
सुनि सुग्रीव हरष कपि करि आए प्रभु काज।।२८।।

चौपाई

जौं न होति सीता सुधि पाई। मधुबन के फल सकहिं कि खाई।।
एहि बिधि मन बिचार कर राजा। आइ गए कपि सहित समाजा।।१।।
आइ सबन्हि नावा पद सीसा। मिलेउ सबन्हि अति प्रेम कपीसा।।
पूँछी कुसल कुसल पद देखी। राम कृपाँ भा काजु बिसेषी।।२।।
नाथ काजु कीन्हेउ हनुमाना। राखे सकल कपिन्ह के प्राना।।
सुनि सुग्रीव बहुरि तेहि मिलेऊ। कपिन्ह सहित रघुपति पहिं चलेऊ।।३।।
राम कपिन्ह जब आवत देखा। किएँ काजु मन हरष बिसेषा।।
फटिक सिला बैठे द्वौ भाई। परे सकल कपि चरनन्हि जाई।।४।।

दोहा

प्रीति सहित सब भेटे रघुपति करुना पुंज।
पूँछी कुसल नाथ अब कुसल देखि पद कंज।।२९।।

चौपाई

जामवंत कह सुनु रघुराया। जा पर नाथ करहु तुम्ह दाया।।
ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर। सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर।।१।।
सोइ बिजई बिनई गुन सागर। तासु सुजसु त्रैलोक उजागर।।
प्रभु कीं कृपा भयउ सबु काजू। जन्म हमार सुफल भा आजू।।२।।
नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी। सहसहुँ मुख न जाइ सो बरनी।।
पवनतनय के चरित सुहाए। जामवंत रघुपतिहि सुनाए।।३।।
सुनत कृपानिधि मन अति भाए। पुनि हनुमान हरषि हियँ लाए।।
कहहु तात केहि भाँति जानकी। रहति करति रच्छा स्वप्रान की।।४।।

दोहा

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट।।३०।।

चौपाई

चलत मोहि चूड़ामनि दीन्ही। रघुपति हृदयँ लाइ सोइ लीन्ही।।
नाथ जुगल लोचन भरि बारी। बचन कहे कछु जनककुमारी।।१।।
अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना। दीन बंधु प्रनतारति हरना।।
मन क्रम बचन चरन अनुरागी। केहिं अपराध नाथ हौं त्यागी।।२।।
अवगुन एक मोर मैं माना। बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना।।
नाथ सो नयनन्हि को अपराधा। निसरत प्रान करहिं हठि बाधा।।३।।
बिरह अगिनि तनु तूल समीरा। स्वास जरइ छन माहिं सरीरा।।
नयन स्रवहिं जलु निज हित लागी। जरैं न पाव देह बिरहागी।।४।।
सीता कै अति बिपति बिसाला। बिनहिं कहें भलि दीनदयाला।।५।।

दोहा

निमिष निमिष करुनानिधि जाहिं कलप सम बीति।
बेगि चलिअ प्रभु आनिअ भुज बल खल दल जीति।।३१।।

चौपाई

सुनि सीता दुख प्रभु सुख अयना। भरि आए जल राजिव नयना।।
बचन कायँ मन मम गति जाही। सपनेहुँ बूझिअ बिपति कि ताही।।१।।
कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई। जब तव सुमिरन भजन न होई।।
केतिक बात प्रभु जातुधान की। रिपुहि जीति आनिबी जानकी।।२।।
सुनु कपि तोहि समान उपकारी। नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी।।
प्रति उपकार करौं का तोरा। सनमुख होइ न सकत मन मोरा।।३।।
सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं। देखेउँ करि बिचार मन माहीं।।
पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता। लोचन नीर पुलक अति गाता।।४।।

दोहा

सुनि प्रभु बचन बिलोकि मुख गात हरषि हनुमंत।
चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि त्राहि भगवंत।।३२।।

चौपाई

बार बार प्रभु चहइ उठावा। प्रेम मगन तेहि उठब न भावा।।
प्रभु कर पंकज कपि कें सीसा। सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा।।१।।
सावधान मन करि पुनि संकर। लागे कहन कथा अति सुंदर।।
कपि उठाइ प्रभु हृदयँ लगावा। कर गहि परम निकट बैठावा।।२।।
कहु कपि रावन पालित लंका। केहि बिधि दहेउ दुर्ग अति बंका।।
प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना। बोला बचन बिगत अभिमाना।।३।।
साखामृग कै बड़ि मनुसाई। साखा तें साखा पर जाई।।
नाघि सिंधु हाटकपुर जारा। निसिचर गन बधि बिपिन उजारा।।४।।
सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछू मोरि प्रभुताई।।५।।

दोहा

ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहिं जा पर तुम्ह अनुकूल।
तव प्रभावँ बड़वानलहि जारि सकइ खलु तूल।।३३।।

चौपाई

नाथ भगति अति सुखदायनी। देहु कृपा करि अनपायनी।।
सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी। एवमस्तु तब कहेउ भवानी।।१।।
उमा राम सुभाउ जेहिं जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना।।
यह संबाद जासु उर आवा। रघुपति चरन भगति सोइ पावा।।२।।
सुनि प्रभु बचन कहहिं कपिबृंदा। जय जय जय कृपाल सुखकंदा।।
तब रघुपति कपिपतिहि बोलावा। कहा चलैं कर करहु बनावा।।३।।
अब बिलंबु केहि कारन कीजे। तुरत कपिन्ह कहुँ आयसु दीजे।।
कौतुक देखि सुमन बहु बरषी। नभ तें भवन चले सुर हरषी।।४।।

दोहा

कपिपति बेगि बोलाए आए जूथप जूथ।
नाना बरन अतुल बल बानर भालु बरूथ।।३४।।

चौपाई

प्रभु पद पंकज नावहिं सीसा। गर्जहिं भालु महाबल कीसा।।
देखी राम सकल कपि सेना। चितइ कृपा करि राजिव नैना।।१।।
राम कृपा बल पाइ कपिंदा। भए पच्छजुत मनहुँ गिरिंदा।।
हरषि राम तब कीन्ह पयाना। सगुन भए सुंदर सुभ नाना।।२।।
जासु सकल मंगलमय कीती। तासु पयान सगुन यह नीती।।
प्रभु पयान जाना बैदेहीं। फरकि बाम अँग जनु कहि देहीं।।३।।
जोइ जोइ सगुन जानकिहि होई। असगुन भयउ रावनहि सोई।।
चला कटकु को बरनैं पारा। गर्जहिं बानर भालु अपारा।।४।।
नख आयुध गिरि पादपधारी। चले गगन महि इच्छाचारी।।
केहरिनाद भालु कपि करहीं। ड़गमगाहिं दिग्गज चिक्करहीं।।५।।

छंद

चिक्करहिं दिग्गज ड़ोल महि गिरि लोल सागर खरभरे।
मन हरष सभ गंधर्ब सुर मुनि नाग किंनर दुख टरे।।
कटकटहिं मर्कट बिकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं।
जय राम प्रबल प्रताप कोसलनाथ गुन गन गावहीं।।१।।
सहि सक न भार उदार अहिपति बार बारहिं मोहई।
गह दसन पुनि पुनि कमठ पृष्ट कठोर सो किमि सोहई।।
रघुबीर रुचिर प्रयान प्रस्थिति जानि परम सुहावनी।
जनु कमठ खर्पर सर्पराज सो लिखत अबिचल पावनी।।२।।

दोहा

एहि बिधि जाइ कृपानिधि उतरे सागर तीर।
जहँ तहँ लागे खान फल भालु बिपुल कपि बीर।।३५।।

चौपाई

उहाँ निसाचर रहहिं ससंका। जब तें जारि गयउ कपि लंका।।
निज निज गृहँ सब करहिं बिचारा। नहिं निसिचर कुल केर उबारा।।१।।

जासु दूत बल बरनि न जाई। तेहि आएँ पुर कवन भलाई।।
दूतिन्ह सन सुनि पुरजन बानी। मंदोदरी अधिक अकुलानी।।२।।
रहसि जोरि कर पति पग लागी। बोली बचन नीति रस पागी।।
कंत करष हरि सन परिहरहू। मोर कहा अति हित हियँ धरहू।।३।।
समुझत जासु दूत कइ करनी। स्रवहिं गर्भ रजनीचर घरनी।।
तासु नारि निज सचिव बोलाई। पठवहु कंत जो चहहु भलाई।।४।।
तव कुल कमल बिपिन दुखदाई। सीता सीत निसा सम आई।।
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें।।५।।

दोहा

राम बान अहि गन सरिस निकर निसाचर भेक।
जब लगि ग्रसत न तब लगि जतनु करहु तजि टेक।।३६।।

चौपाई

श्रवन सुनी सठ ता करि बानी। बिहसा जगत बिदित अभिमानी।।
सभय सुभाउ नारि कर साचा। मंगल महुँ भय मन अति काचा।।१।।
जौं आवइ मर्कट कटकाई। जिअहिं बिचारे निसिचर खाई।।
कंपहिं लोकप जाकीं त्रासा। तासु नारि सभीत बड़ि हासा।।२।।
अस कहि बिहसि ताहि उर लाई। चलेउ सभाँ ममता अधिकाई।।
मंदोदरी हृदयँ कर चिंता। भयउ कंत पर बिधि बिपरीता।।३।।
बैठेउ सभाँ खबरि असि पाई। सिंधु पार सेना सब आई।।
बूझेसि सचिव उचित मत कहहू। ते सब हँसे मष्ट करि रहहू।।४।।
जितेहु सुरासुर तब श्रम नाहीं। नर बानर केहि लेखे माहीं।।५।।

दोहा

सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिहीं नास।।३७।।

चौपाई

सोइ रावन कहुँ बनी सहाई। अस्तुति करहिं सुनाइ सुनाई।।
अवसर जानि बिभीषनु आवा। भ्राता चरन सीसु तेहिं नावा।।१।।

पुनि सिरु नाइ बैठ निज आसन। बोला बचन पाइ अनुसासन।।
जौ कृपाल पूँछिहु मोहि बाता। मति अनुरूप कहउँ हित ताता।।२।।
जो आपन चाहै कल्याना। सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना।।
सो परनारि लिलार गोसाईं। तजउ चउथि के चंद कि नाईं।।३।।
चौदह भुवन एक पति होई। भूतद्रोह तिष्टइ नहिं सोई।।
गुन सागर नागर नर जोऊ। अलप लोभ भल कहइ न कोऊ।।४।।

दोहा

काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत।।३८।।

चौपाई

तात राम नहिं नर भूपाला। भुवनेस्वर कालहु कर काला।।
ब्रह्म अनामय अज भगवंता। ब्यापक अजित अनादि अनंता।।१।।
गो द्विज धेनु देव हितकारी। कृपासिंधु मानुष तनु धारी।।
जन रंजन भंजन खल ब्राता। बेद धर्म रच्छक सुनु भ्राता।।२।।
ताहि बयरु तजि नाइअ माथा। प्रनतारति भंजन रघुनाथा।।
देहु नाथ प्रभु कहुँ बैदेही। भजहु राम बिनु हेतु सनेही।।३।।
सरन गएँ प्रभु ताहु न त्यागा। बिस्व द्रोह कृत अघ जेहि लागा।।
जासु नाम त्रय ताप नसावन। सोइ प्रभु प्रगट समुझु जियँ रावन।।४।।

दोहा

बार बार पद लागउँ बिनय करउँ दससीस।
परिहरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस।।३९(क)।।
मुनि पुलस्ति निज सिष्य सन कहि पठई यह बात।
तुरत सो मैं प्रभु सन कही पाइ सुअवसरु तात।।३९(ख)।।

चौपाई

माल्यवंत अति सचिव सयाना। तासु बचन सुनि अति सुख माना।।
तात अनुज तव नीति बिभूषन। सो उर धरहु जो कहत बिभीषन।।१।।

रिपु उतकरष कहत सठ दोऊ। दूरि न करहु इहाँ हइ कोऊ।।
माल्यवंत गृह गयउ बहोरी। कहइ बिभीषनु पुनि कर जोरी।।२।।
सुमति कुमति सब कें उर रहहीं। नाथ पुरान निगम अस कहहीं।।
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।।३।।
तव उर कुमति बसी बिपरीता। हित अनहित मानहु रिपु प्रीता।।
कालराति निसिचर कुल केरी। तेहि सीता पर प्रीति घनेरी।।४।।

दोहा

तात चरन गहि मागउँ राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहुँ अहित न होइ तुम्हार।।४०।।

चौपाई

बुध पुरान श्रुति संमत बानी। कही बिभीषन नीति बखानी।।
सुनत दसानन उठा रिसाई। खल तोहि निकट मृत्यु अब आई।।१।।
जिअसि सदा सठ मोर जिआवा। रिपु कर पच्छ मूढ़ तोहि भावा।।
कहसि न खल अस को जग माहीं। भुज बल जाहि जिता मैं नाहीं।।२।।
मम पुर बसि तपसिन्ह पर प्रीती। सठ मिलु जाइ तिन्हहि कहु नीती।।
अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा। अनुज गहे पद बारहिं बारा।।३।।
उमा संत कइ इहइ बड़ाई। मंद करत जो करइ भलाई।।
तुम्ह पितु सरिस भलेहिं मोहि मारा। रामु भजें हित नाथ तुम्हारा।।४।।
सचिव संग लै नभ पथ गयऊ। सबहि सुनाइ कहत अस भयऊ।।५।।

दोहा

रामु सत्यसंकल्प प्रभु सभा कालबस तोरि।
मैं रघुबीर सरन अब जाउँ देहु जनि खोरि।।४१।।

चौपाई

अस कहि चला बिभीषनु जबहीं। आयूहीन भए सब तबहीं।।
साधु अवग्या तुरत भवानी। कर कल्यान अखिल कै हानी।।१।।
रावन जबहिं बिभीषन त्यागा। भयउ बिभव बिनु तबहिं अभागा।।
चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं। करत मनोरथ बहु मन माहीं।।२।।

देखिहउँ जाइ चरन जलजाता। अरुन मृदुल सेवक सुखदाता।।
जे पद परसि तरी रिषिनारी। दंड़क कानन पावनकारी।।३।।
जे पद जनकसुताँ उर लाए। कपट कुरंग संग धर धाए।।
हर उर सर सरोज पद जेई। अहोभाग्य मैं देखिहउँ तेई।।४।।

दोहा

जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि भरतु रहे मन लाइ।
ते पद आजु बिलोकिहउँ इन्ह नयनन्हि अब जाइ।।४२।।

चौपाई

एहि बिधि करत सप्रेम बिचारा। आयउ सपदि सिंधु एहिं पारा।।
कपिन्ह बिभीषनु आवत देखा। जाना कोउ रिपु दूत बिसेषा।।१।।
ताहि राखि कपीस पहिं आए। समाचार सब ताहि सुनाए।।
कह सुग्रीव सुनहु रघुराई। आवा मिलन दसानन भाई।।२।।
कह प्रभु सखा बूझिऐ काहा। कहइ कपीस सुनहु नरनाहा।।
जानि न जाइ निसाचर माया। कामरूप केहि कारन आया।।३।।
भेद हमार लेन सठ आवा। राखिअ बाँधि मोहि अस भावा।।
सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी। मम पन सरनागत भयहारी।।४।।
सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना। सरनागत बच्छल भगवाना।।५।।

दोहा

सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पावँर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि।।४३।।

चौपाई

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू।।
सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं।।१।।
पापवंत कर सहज सुभाऊ। भजनु मोर तेहि भाव न काऊ।।
जौं पै दुष्टहृदय सोइ होई। मोरें सनमुख आव कि सोई।।२।।
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।
भेद लेन पठवा दससीसा। तबहुँ न कछु भय हानि कपीसा।।३।।

जग महुँ सखा निसाचर जेते। लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते।।
जौं सभीत आवा सरनाईं। रखिहउँ ताहि प्रान की नाईं।।४।।

दोहा

उभय भाँति तेहि आनहु हँसि कह कृपानिकेत।
जय कृपाल कहि कपि चले अंगद हनू समेत।।४४।।

चौपाई

सादर तेहि आगें करि बानर। चले जहाँ रघुपति करुनाकर।।
दूरिहि ते देखे द्वौ भ्राता। नयनानंद दान के दाता।।१।।
बहुरि राम छबिधाम बिलोकी। रहेउ ठटुकि एकटक पल रोकी।।
भुज प्रलंब कंजारुन लोचन। स्यामल गात प्रनत भय मोचन।।२।।
सिंघ कंध आयत उर सोहा। आनन अमित मदन मन मोहा।।
नयन नीर पुलकित अति गाता। मन धरि धीर कही मृदु बाता।।३।।
नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर बंस जनम सुरत्राता।।
सहज पापप्रिय तामस देहा। जथा उलूकहि तम पर नेहा।।४।।

दोहा

श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर।।४५।।

चौपाई

अस कहि करत दंड़वत देखा। तुरत उठे प्रभु हरष बिसेषा।।
दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा। भुज बिसाल गहि हृदयँ लगावा।।१।।
अनुज सहित मिलि ढिग बैठारी। बोले बचन भगत भय हारी।।
कहु लंकेस सहित परिवारा। कुसल कुठाहर बास तुम्हारा।।२।।
खल मंड़ली बसहु दिनु राती। सखा धरम निबहइ केहि भाँती।।
मैं जानउँ तुम्हारि सब रीती। अति नय निपुन न भाव अनीती।।३।।
बरु भल बास नरक कर ताता। दुष्ट संग जनि देइ बिधाता।।
अब पद देखि कुसल रघुराया। जौं तुम्ह कीन्हि जानि जन दाया।।४।।

दोहा

तब लगि कुसल न जीव कहुँ सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ सोक धाम तजि काम।।४६।।

चौपाई

तब लगि हृदयँ बसत खल नाना। लोभ मोह मच्छर मद माना।।
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरें चाप सायक कटि भाथा।।१।।
ममता तरुन तमी अँधिआरी। राग द्वेष उलूक सुखकारी।।
तब लगि बसति जीव मन माहीं। जब लगि प्रभु प्रताप रबि नाहीं।।२।।
अब मैं कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे।।
तुम्ह कृपाल जा पर अनुकूला। ताहि न ब्याप त्रिबिध भवसूला।।३।।
मैं निसिचर अति अधम सुभाऊ। सुभ आचरनु कीन्ह नहिं काऊ।।
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा। तेहिं प्रभु हरषि हृदयँ मोहि लावा।।४।।

दोहा

अहोभाग्य मम अमित अति राम कृपा सुख पुंज।
देखेउँ नयन बिरंचि सिव सेब्य जुगल पद कंज।।४७।।

चौपाई

सुनहु सखा निज कहउँ सुभाऊ। जान भुसुंड़ि संभु गिरिजाऊ।।
जौं नर होइ चराचर द्रोही। आवै सभय सरन तकि मोही।।१।।
तजि मद मोह कपट छल नाना। करउँ सद्य तेहि साधु समाना।।
जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा।।२।।
सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहि बाँध बरि ड़ोरी।।
समदरसी इच्छा कछु नाहीं। हरष सोक भय नहिं मन माहीं।।३।।
अस सज्जन मम उर बस कैसें। लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें।।
तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरें। धरउँ देह नहिं आन निहोरें।।४।।

दोहा

सगुन उपासक परहित निरत नीति दृढ़ नेम।
ते नर प्रान समान मम जिन्ह कें द्विज पद प्रेम।।४८।।

चौपाई

सुनु लंकेस सकल गुन तोरें। तातें तुम्ह अतिसय प्रिय मोरें।।
राम बचन सुनि बानर जूथा। सकल कहहिं जय कृपा बरूथा।।१।।
सुनत बिभीषनु प्रभु कै बानी। नहिं अघात श्रवनामृत जानी।।
पद अंबुज गहि बारहिं बारा। हृदयँ समात न प्रेमु अपारा।।२।।
सुनहु देव सचराचर स्वामी। प्रनतपाल उर अंतरजामी।।
उर कछु प्रथम बासना रही। प्रभु पद प्रीति सरित सो बही।।३।।
अब कृपाल निज भगति पावनी। देहु सदा सिव मन भावनी।।
एवमस्तु कहि प्रभु रनधीरा। मागा तुरत सिंधु कर नीरा।।४।।
जदपि सखा तव इच्छा नाहीं। मोर दरसु अमोघ जग माहीं।।
अस कहि राम तिलक तेहि सारा। सुमन बृष्टि नभ भई अपारा।।५।।

दोहा

रावन क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड़।
जरत बिभीषनु राखेउ दीन्हेउ राजु अखंड़।।४९(क)।।
जो संपति सिव रावनहि दीन्हि दिएँ दस माथ।
सोइ संपदा बिभीषनहि सकुचि दीन्हि रघुनाथ।।४९(ख)।।

चौपाई

अस प्रभु छाड़ि भजहिं जे आना। ते नर पसु बिनु पूँछ बिषाना।।
निज जन जानि ताहि अपनावा। प्रभु सुभाव कपि कुल मन भावा।।१।।
पुनि सर्बग्य सर्ब उर बासी। सर्बरूप सब रहित उदासी।।
बोले बचन नीति प्रतिपालक। कारन मनुज दनुज कुल घालक।।२।।
सुनु कपीस लंकापति बीरा। केहि बिधि तरिअ जलधि गंभीरा।।
संकुल मकर उरग झष जाती। अति अगाध दुस्तर सब भाँती।।३।।
कह लंकेस सुनहु रघुनायक। कोटि सिंधु सोषक तव सायक।।
जद्यपि तदपि नीति असि गाई। बिनय करिअ सागर सन जाई।।४।।

दोहा

प्रभु तुम्हार कुलगुर जलधि कहिहि उपाय बिचारि।
बिनु प्रयास सागर तरिहि सकल भालु कपि धारि।।५०।।

चौपाई

सखा कही तुम्ह नीकि उपाई। करिअ दैव जौं होइ सहाई।।
मंत्र न यह लछिमन मन भावा। राम बचन सुनि अति दुख पावा।।१।।
नाथ दैव कर कवन भरोसा। सोषिअ सिंधु करिअ मन रोसा।।
कादर मन कहुँ एक अधारा। दैव दैव आलसी पुकारा।।२।।
सुनत बिहसि बोले रघुबीरा। ऐसेहिं करब धरहु मन धीरा।।
अस कहि प्रभु अनुजहि समुझाई। सिंधु समीप गए रघुराई।।३।।
प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई। बैठे पुनि तट दर्भ ड़साई।।
जबहिं बिभीषन प्रभु पहिं आए। पाछें रावन दूत पठाए।।४।।

दोहा

सकल चरित तिन्ह देखे धरें कपट कपि देह।
प्रभु गुन हृदयँ सराहहिं सरनागत पर नेह।।५१।।

चौपाई

प्रगट बखानहिं राम सुभाऊ। अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ।।
रिपु के दूत कपिन्ह तब जाने। सकल बाँधि कपीस पहिं आने।।१।।
कह सुग्रीव सुनहु सब बानर। अंग भंग करि पठवहु निसिचर।।
सुनि सुग्रीव बचन कपि धाए। बाँधि कटक चहु पास फिराए।।२।।
बहु प्रकार मारन कपि लागे। दीन पुकारत तदपि न त्यागे।।
जो हमार हर नासा काना। तेहि कोसलाधीस कै आना।।३।।
सुनि लछिमन सब निकट बोलाए। दया लागि हँसि तुरत छोड़ाए।।
रावन कर दीजहु यह पाती। लछिमन बचन बाचु कुलघाती।।४।।

दोहा

कहेहु मुखागर मूढ़ सन मम संदेसु उदार।
सीता देइ मिलहु न त आवा कालु तुम्हार।।५२।।

चौपाई

तुरत नाइ लछिमन पद माथा। चले दूत बरनत गुन गाथा।।
कहत राम जसु लंकाँ आए। रावन चरन सीस तिन्ह नाए।।१।।
बिहसि दसानन पूँछी बाता। कहसि न सुक आपनि कुसलाता।।
पुनि कहु खबरि बिभीषन केरी। जाहि मृत्यु आई अति नेरी।।२।।
करत राज लंका सठ त्यागी। होइहि जव कर कीट अभागी।।
पुनि कहु भालु कीस कटकाई। कठिन काल प्रेरित चलि आई।।३।।
जिन्ह के जीवन कर रखवारा। भयउ मृदुल चित सिंधु बिचारा।।
कहु तपसिन्ह कै बात बहोरी। जिन्ह के हृदयँ त्रास अति मोरी।।४।।

दोहा

की भइ भेंट कि फिरि गए श्रवन सुजसु सुनि मोर।
कहसि न रिपु दल तेज बल बहुत चकित चित तोर।।५३।।

चौपाई

नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसें। मानहु कहा क्रोध तजि तैसें।।
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा। जातहिं राम तिलक तेहि सारा।।१।।
रावन दूत हमहि सुनि काना। कपिन्ह बाँधि दीन्हे दुख नाना।।
श्रवन नासिका काटैं लागे। राम सपथ दीन्हें हम त्यागे।।२।।
पूँछिहु नाथ राम कटकाई। बदन कोटि सत बरनि न जाई।।
नाना बरन भालु कपि धारी। बिकटानन बिसाल भयकारी।।३।।
जेहिं पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा। सकल कपिन्ह महँ तेहि बलु थोरा।।
अमित नाम भट कठिन कराला। अमित नाग बल बिपुल बिसाला।।४।।

दोहा

द्विबिद मयंद नील नल अंगद गद बिकटासि।
दधिमुख केहरि निसठ सठ जामवंत बलरासि।।५४।।

चौपाई

ए कपि सब सुग्रीव समाना। इन्ह सम कोटिन्ह गनइ को नाना।।
राम कृपाँ अतुलित बल तिन्हहीं। तृन समान त्रैलोकहि गनहीं।।१।।

अस मैं सुना श्रवन दसकंधर। पदुम अठारह जूथप बंदर।।
नाथ कटक महँ सो कपि नाहीं। जो न तुम्हहि जीतै रन माहीं।।२।।
परम क्रोध मीजहिं सब हाथा। आयसु पै न देहिं रघुनाथा।।
सोषहिं सिंधु सहित झष ब्याला। पूरहिं न त भरि कुधर बिसाला।।३।।
मर्दि गर्द मिलवहिं दससीसा। ऐसेइ बचन कहहिं सब कीसा।।
गर्जहिं तर्जहिं सहज असंका। मानहुँ ग्रसन चहत हहिं लंका।।४।।

दोहा

सहज सूर कपि भालु सब पुनि सिर पर प्रभु राम।
रावन काल कोटि कहुँ जीति सकहिं संग्राम।।५५।।

चौपाई

राम तेज बल बुधि बिपुलाई। सेष सहस सत सकहिं न गाई।।
सक सर एक सोषि सत सागर। तव भ्रातहि पूँछेउ नय नागर।।१।।
तासु बचन सुनि सागर पाहीं। मागत पंथ कृपा मन माहीं।।
सुनत बचन बिहसा दससीसा। जौं असि मति सहाय कृत कीसा।।२।।
सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई। सागर सन ठानी मचलाई।।
मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई। रिपु बल बुद्धि थाह मैं पाई।।३।।
सचिव सभीत बिभीषन जाकें। बिजय बिभूति कहाँ जग ताकें।।
सुनि खल बचन दूत रिस बाढ़ी। समय बिचारि पत्रिका काढ़ी।।४।।
रामानुज दीन्ही यह पाती। नाथ बचाइ जुड़ावहु छाती।।
बिहसि बाम कर लीन्ही रावन। सचिव बोलि सठ लाग बचावन।।५।।

दोहा

बातन्ह मनहि रिझाइ सठ जनि घालसि कुल खीस।
राम बिरोध न उबरसि सरन बिष्नु अज ईस।।५६(क)।।
की तजि मान अनुज इव प्रभु पद पंकज भृंग।
होहि कि राम सरानल खल कुल सहित पतंग।।५६(ख)।।

चौपाई

सुनत सभय मन मुख मुसुकाई। कहत दसानन सबहि सुनाई।।
भूमि परा कर गहत अकासा। लघु तापस कर बाग बिलासा।।१।।

कह सुक नाथ सत्य सब बानी। समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी।।
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा। नाथ राम सन तजहु बिरोधा।।२।।
अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ।।
मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही। उर अपराध न एकउ धरिही।।३।।
जनकसुता रघुनाथहि दीजे। एतना कहा मोर प्रभु कीजे।।
जब तेहिं कहा देन बैदेही। चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही।।४।।
नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ। कृपासिंधु रघुनायक जहाँ।।
करि प्रनामु निज कथा सुनाई। राम कृपाँ आपनि गति पाई।।५।।
रिषि अगस्ति कीं साप भवानी। राछस भयउ रहा मुनि ग्यानी।।
बंदि राम पद बारहिं बारा। मुनि निज आश्रम कहुँ पगु धारा।।६।।

दोहा

बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति।।५७।।

चौपाई

लछिमन बान सरासन आनू। सोषौं बारिधि बिसिख कृसानू।।
सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुंदर नीती।।१।।
ममता रत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी।।
क्रोधिहि सम कामिहि हरि कथा। ऊसर बीज बएँ फल जथा।।२।।
अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा। यह मत लछिमन के मन भावा।।
संधानेउ प्रभु बिसिख कराला। उठी उदधि उर अंतर ज्वाला।।३।।
मकर उरग झष गन अकुलाने। जरत जंतु जलनिधि जब जाने।।
कनक थार भरि मनि गन नाना। बिप्र रूप आयउ तजि माना।।४।।

दोहा

काटेहिं पइ कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु डाटेहिं पइ नव नीच।।५८।।

चौपाई

सभय सिंधु गहि पद प्रभु केरे। छमहु नाथ सब अवगुन मेरे।।
गगन समीर अनल जल धरनी। इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी।।१।।

तव प्रेरित मायाँ उपजाए। सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाए।।
प्रभु आयसु जेहि कहँ जस अहई। सो तेहि भाँति रहें सुख लहई।।२।।
प्रभु भल कीन्ह मोहि सिख दीन्ही। मरजादा पुनि तुम्हरी कीन्ही।।
ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।।३।।
प्रभु प्रताप मैं जाब सुखाई। उतरिहि कटकु न मोरि बड़ाई।।
प्रभु अग्या अपेल श्रुति गाई। करौं सो बेगि जो तुम्हहि सोहाई।।४।।

दोहा

सुनत बिनीत बचन अति कह कृपाल मुसुकाइ।
जेहि बिधि उतरै कपि कटकु तात सो कहहु उपाइ।।५९।।

चौपाई

नाथ नील नल कपि द्वौ भाई। लरिकाईं रिषि आसिष पाई।।
तिन्ह कें परस किएँ गिरि भारे। तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे।।१।।
मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई। करिहउँ बल अनुमान सहाई।।
एहि बिधि नाथ पयोधि बँधाइअ। जेहिं यह सुजसु लोक तिहुँ गाइअ।।२।।
एहिं सर मम उत्तर तट बासी। हतहु नाथ खल नर अघ रासी।।
सुनि कृपाल सागर मन पीरा। तुरतहिं हरी राम रनधीरा।।३।।
देखि राम बल पौरुष भारी। हरषि पयोनिधि भयउ सुखारी।।
सकल चरित कहि प्रभुहि सुनावा। चरन बंदि पाथोधि सिधावा।।४।।

छंद

निज भवन गवनेउ सिंधु श्रीरघुपतिहि यह मत भायऊ।
यह चरित कलि मलहर जथामति दास तुलसी गायऊ।।
सुख भवन संसय समन दवन बिषाद रघुपति गुन गना।
तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना।।

दोहा

सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलयान।।६०।।

□

आरतियाँ

आरती श्री गणेश जी

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

माता जाकी पार्वती पिता महादेवा।
लड्डुवन का भोग लगे संत करें सेवा।।

एकदन्त दयावंत चार भुजा धारी।
मस्तक पे सिंदूर सोहे मूसे की सवारी।।

अंधन को आँख देत कोढ़िन को काया।
बाँझन को पुत्र देत निर्धन को माया।।

हार चढ़े फूल चढ़े और चढ़े मेवा।
सूरस्याम शरण आयो सफल कीजै सेवा।।

दीनन की लाज राखो शंभु-सुत वारी।
कामना को पूरा करो जाऊँ बलिहारी।।

□

आरती श्री दुर्गा जी

जय अंबे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी।
तुमको निशदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिव जी।।
माँग सिंदूर विराजत टीको मृगमद कौ।
उज्ज्वल से दोऊ नैना चंद्रवदन नीकौ।।
कनक समान कलेवर रक्तांबर राजै।
रक्त पुष्प गल माला कंठन पर साजै।।
केहरि वाहन राजत खडग खप्पर धारी।
सुर-नर-मुनिजन सेवत तिनके दुःखहारी।।
कानन कुंडल शोभित नासाग्रे मोती।
कोटिक चंद्र दिवाकर राजत सम ज्योति।।
शंभु निशंभु बिढारे महिषासुर घाती।
धूम्र विलोचन नैना निशदिन मदमाती।।
चंड-मुंड संहारे, शोणित बीज हरे।
मधु-कैटभ दोऊ मारे, सुर भयहीन करे।।
ब्रह्माणी, रुद्राणी, तुम कमला रानी।
आगम निगम बखानी, तुम शिव पटरानी।।
चौंसठ योगिनी गावत नृत्य करत भैरू।
बाजत ताल मृदंगा अरु बाजत डमरू।।
तुम ही जग की माता, तुम ही हो कर्ता।
भक्तन की दुःख हरता, सुख संपत्ति कर्ता।।

भुजा अष्ट अति शोभित वरमुद्रा धारी।
मनवांछित फल पावत सेवत नर नारी।।
कंचन थाल विराजत अगर कपूर बाती।
मालकेतु में राजत कोटि रतन ज्योती।।
माँ अंबे की आरती जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी सुख-संपत्ति पावे।।

☐

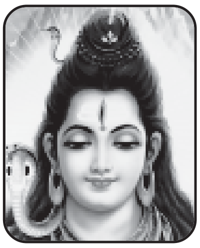

आरती श्री शंकर जी

जय शिव ओंकारा, प्रभु जय शिव ओंकारा।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धांगी धारा।।
ओ३म् हर हर हर महोदव!
एकानन चतुरानन पंचानन राजे।
हंसासन गरुडासन वृषवाहन साजे।। ओ३म् हर हर···
दो भुज चारु चतुर्भुज दसमुख अति सोहे।
तीनों रूप निरखते त्रिभुवन जन मोहे।। ओ३म् हर हर···
अक्षमाला बनमाला मुंड़माला धारी।
चंदन मृग मद सोहे भोले शुभकारी।। ओ३म् हर हर···
श्वेतांबर पीतांबर बाघंबर अंगे।
ब्रह्मादिक सनकादिक प्रेतादिक संगे।। ओ३म् हर हर···
कर मध्ये कमंडलु त्रिशूल धारी।
सुखकारी दुःखहारी जग पालन कारी।। ओ३म् हर हर···
ब्रह्मा, विष्णु, सदाशिव जानत अविवेका।
प्रणवाक्षर में शोभित ये तीनों एका।। ओ३म् हर हर···
त्रिगुण स्वामि की आरति जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी मनवांछित फल पावे।। ओ३म् हर हर···
बोलो भगवान् ब्रह्मा विष्णु महेश की जय!
ओ३म् नमः शिवाय!

□

आरती श्री जगदीश जी

ओ३म् जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे।
भक्त जनन के संकट क्षण में दूर करे।।
जो ध्यावे फल पावे दुख विनसे मन का।
सुख संपत्ति घर आवे कष्ट मिटे तन का।।
मात-पिता तुम मेरे शरण गहूँ किसकी।
तुम बिन और न दूजा आस करूँ जिसकी।।
तुम पूरण परमात्मा तुम अंतर्यामी।
पारब्रह्म परमेश्वर तुम सबके स्वामी।।
तुम करुणा के सागर तुम पालन कर्ता।
मैं मूरख खल कामी कृपा करो भर्ता।।
तुम हो एक अगोचर सबके प्राणपति।
किस विधि मिलूँ दयामय तुमको मैं कुमति।।
दीनबंधु दुःखहर्ता तुम रक्षक मेरे।
करुणा हस्त उठाओ द्वार पड़ा तेरे।।
विषय विकार मिटाओ पाप हरो देवा।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ संतन की सेवा।।
तन मन धन सबकुछ है तेरा।
तेरा तुझको अर्पण क्या लागे मेरा।।
श्री जगदीशजी की आरती जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी सुख संपत्ति पावे।।

□

आरती श्री सत्यनारायण जी

जय लक्ष्मी रमणा, स्वामी जय लक्ष्मी रमणा।
सत्यनारायण स्वामी जन पातक हरणा।।
रत्न जड़ित सिंहासन अद्‌भुत छविराजे।
नारद करत निरंजन घंटा ध्वनि बाजे।।
प्रगट भए कलिकारण द्विज को दरस दियो।
बूढ़ो ब्राह्मण बन के कंचन महल कियो।
दुर्बल भील कठारो, जिन पर कृपा करी।
चंद्रचूड़ इक राजा, जिनकी विपद हरी।।
वैश्य मनोरथ पायो श्रद्धा तज दीनी।
सो फल भोग्यो प्रभुजी फिर स्तुति कीनी।।
भाव-भक्ति के कारण छिन-छिन रूप धर्‌यो।
श्रद्धा धारण कीन्हीं जिनके काज सर्‌यो।।
ग्वाल-बाल संग राजा वन में भक्ति करी।
मनवांछित फल दीन्हा दीनदयालु हरी।।
चढ़त प्रसाद सवायो कदली फल मेवा।
धूप दीप तुलसी से राजी सत्यदेवा।।
सत्यनारायणजी की आरती जो कोई नर गावे।
ऋद्धि-सिद्धि सुख-संपत्ति जी भर के पावे।।

☐

आरती श्री रामचंद्र जी

आरती कीजै श्री रघुबरजी की।
सत् चित् आनंद शिव सुंदर की।।
दशरथ-तनय, कौसिला-नंदन।
सुर-मुनि-रक्षक दैत्य-निकंदन।।
अनुगत-भक्त भक्त-उर-चंदन।
मर्यादा-पुरुषोत्तम वर की।।
निर्गुण-सगुन अरूप-रूपनिधि।
सकल लोक-वंदित विभिन्न विधि।।
हरण शोक-भय, दायक सब सिधि।
मायारहित दिव्य नर-वर की।।
जानकी पति सुराधिपति जगपति।
अखिल लोक पालक त्रिलोक गति।।
विश्ववंद्य अनवंद्य अमित-मति।
एकमात्र गति सचराचर की।।
शरणागत - वत्सल - व्रतधारी।
भक्त-कल्पतरु-वर असुरारी।।
नाम लेत जग पावनकारी।
बानर-सखा, दीन-दुख हर की।।

□

आरती श्री कुंजबिहारी जी

आरती कुंजबिहारी की, श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की,
गले में वैजंती माला, बजावें मुरली मधुर बाला।
श्रवण में कुंडल झल काला, नंद के आनंद नंदलाला,
गगन सम अंग कांति काली, राधिका चमक रही आली।
लतन में ठाढ़े बनमाली।
भ्रमर सी अलक, कस्तूरी तिलक।
चंद्र सी झलक, ललित छवि श्यामा प्यारी की।
श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की।।
कनकमय मोर मुकुट विलसैं, देवता दर्शन को तरसैं,
गगन से सुमन रासि बरसैं, बजे मुरचंग, मधुर मिरदंग,
ग्वालिनी संग, अतुल रति गोप कुमारी की।।
श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की।।
जहाँ से प्रकट भई गंगा, कलुष कलि हारिणी श्रीगंगा,
स्मरण से होत मोह भंगा, बसी शिव शीश, जटा के बीच।
हरै अघ कीच, चरण छवि श्रीबनवारी की।
श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की।।
चमकती उज्ज्वल तट रेणू, बजा रहे वृंदावन वेणू,
चहूँ दिशि गोपी ग्वाल धेनू, हँसत मृदु मंद, चाँदनी चंद।
कटत भव फंद, टेर सुनु दीन दुखारी की।।
श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की।। □

आरती श्री हनुमान जी

आरती कीजै हनुमान लला की। दुष्टदलन रघुनाथ कला की।। टेक।।

जाके बल से गिरिवर काँपै। रोग-दोष जाके निकट न झाँपै।।
अंजनि पुत्र महा बलदाई। संतन के प्रभु सदा सहाई।।
दे बीरा रघुनाथ पठाए। लंका जारि सीय सुधि लाए।।

लंका सो कोट समुद्र सी खाई। जात पवनसुत बार न लाई।।
लंका जारि असुर संहारे। सियारामजी के काज सँवारे।।
लक्ष्मण मूर्च्छित पड़े सकारे। आनि संजीवन प्रान उबारे।।
पैठी पाताल तोरि जम-कारे। अहिरावन की भुजा उखारे।।

बाएँ भुजा असुर दल मारे। दाहिने भुजा संतजन तारे।।
सुर नर मुनि आरती उतारें। जै जै जै हनुमान उचारें।।
कंचन थार कपूर लौ छाई। आरति करत अंजना माई।।
जो हनुमान (जी) की आरती गावै। बसि बैकुंठ परमपद पावै।।

□

आरती श्री लक्ष्मी जी

ओ३म् जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता।
तुमको निशिदिन सेवत हर विष्णु विधाता।।
उमा, रमा, ब्रह्माणी, तुम ही जग-माता।
सूर्य-चंद्रमा ध्यावत, नारद ऋषि गाता।।
दुर्गा रूप निरंजनि, सुख-संपत्ति दाता।
जो कोई तुमको ध्यावत, ऋद्धि-सिद्धि पाता।।
तुम पाताल-निवासिनि, तुम ही शुभदाता।
कर्म-प्रभाव-प्रकाशिनि, भवनिधि की त्राता।।
जिस घर में तुम रहतीं, सब सद्गुण आता।
सब संभव हो जाता, मन नहिं घबराता।।
तुम बिन यज्ञ न होते, वस्त्र न कोई पाता।
खान-पान का वैभव, सब तुमसे आता।।
शुभ-गुण मंदिर सुंदर, क्षीरोदधि जाता।
रत्न चतुर्दश तुम बिन, कोई नहीं पाता।।
माँ लक्ष्मीजी की आरती, जो कोई जन गाता।
उर आनंद समाता, पाप उतर जाता।।

□

आरती श्री सरस्वती जी

जय सरस्वती माता, मैया जय सरस्वती माता।
सद्‌गुण वैभव शालिनि, त्रिभुवन विख्याता।।
चंद्रवदनि पद्‌मासिनि, द्युति मंगलकारी।
सोहे हंस सवारी, अतुल तेजधारी।।
बाएँ कर में वीणा, दाएँ कर माला।
शीश मुकुट मणि सोहे, गल मोतियन माला।।
देवि शरण जो आए, उनका उद्धार किया।
पैठि मंथरा दासी, रावण नाश किया।।
विद्या ज्ञान प्रदायिनि ज्ञान प्रकाश भरो।
मोह, अज्ञान तिमिर का, जग से नाश करो।
धूप दीप फल मेवा, माँ स्वीकार करो।
ज्ञानचक्षु दे माता, जग निस्तार करो।।
माँ सरस्वती की आरती, जो कोई जन गावे।
हितकारी सुखकारी, ज्ञान भक्ति पावे।।

□

आरती श्रीकृष्णजी की

जय श्रीकृष्ण देवा, प्रभु जय श्रीकृष्ण देवा।
अपनी भक्ति दीजो चरणन की सेवा।।
मोर मुकुट पीतांबर गलमाला धारी।
कानों में कुंडल झलके बंसी की छवि न्यारी। जय···

आप हो पिता हमारे, हम बालक सारे।
अपनी दया दिखाओ, आन खड़े द्वारे। जय···

आप हो कृपा के सागर, पाप हरण स्वामी।
हम हैं कामी क्रोधी, कपटी अज्ञानी। जय···

आप हो दीनों के बंधु, भक्तों के प्यारे।
जितने शरण में आए, आपने सब तारे। जय···

जय पूरण परमेश्वर, जय प्रभु कंसारी।
प्रेमी दास तिहारो, जय गिरिवर धारी।। जय···

☐

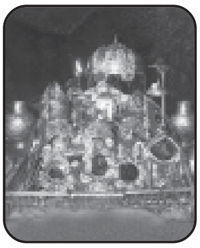

आरती श्री वैष्णो जी

जै वैष्णवी माता, मैया जै वैष्णवी माता।
हाथ जोड़ तेरे आगे, आरती मैं गाता।।
शीश पे छत्र बिराजे, मूरतिया प्यारी।
गंगा बहे चरणों में, ज्योति जगे न्यारी।।
ब्रह्मा वेद पढ़े नित द्वारे, शंकर ध्यान धरे।
सेवक चँवर डुलावत, नारद नृत्य करे।।
सुंदर गुफा तुम्हारी, मन को अति भावे।
बार-बार देखन को, ऐ माँ मन चावे।।
भवन पे झंडे झूलें, घंटा ध्वनि बाजे।
ऊँचा पर्वत तेरा, माता प्रिय लागे।।
पान सुपारी ध्वजा नारियल, भेंट पुष्प मेवा।
दास खड़े चरणों में, दर्शन दो देवा।।
जो जन निश्चय करके, द्वार तेरे आवे।
उसकी इच्छा पूरण माता हो जावे।।
इतनी स्तुति निशदिन, जो नर भी गावे।
कहते सेवक ध्यानूँ, सुख संपत्ति पावे।।

□

चालीसाएँ

श्रीदुर्गा चालीसा

नमो नमो दुर्गे सुख करनी।
नमो नमो अंबे दुख हरनी।।
निरंकार है ज्योति तुम्हारी।
तिहूँ लोक फैली उजियारी।।
ससि ललाट मुख महा बिसाला।
नेत्र लाल भृकुटी बिकराला।।

रूप मातु को अधिक सुहावे।
दरस करत जन अति सुख पावे।।
तुम संसार सक्ति लय कीन्हा।
पालन हेतु अन्न धन दीन्हा।।
अन्नपूर्णा हुई जग पाला।
तुम ही आदि सुंदरी बाला।।
प्रलयकाल सब नासन हारी।
तुम गौरी सिव संकर प्यारी।।
सिवजोगी तुम्हरे गुन गावें।
ब्रह्मा विष्णु तुम्हें नित ध्यावें।।
रूप सरस्वति को तुम धारा।
दे सुबुद्धि ऋषि मुनिन्ह उबारा।।

धरा रूप नरसिंह को अंबा।
परगट भई फाड़ कर खंबा।।
रच्छा करि प्रह्लाद बचायो।
हिरनाकुस को स्वर्ग पठायो।।
लछमी रूप धरो जग माहीं।
श्री नारायन अंग समाहीं।।
छीर सिंधु में करत बिलासा।
दया सिंधु दीजै मन आसा।।
हिंगलाज में तुम्हीं भवानी।
महिमा अमित न जाय बखानी।।
मातंगी धूमावति माता।
भुवनेस्वरि बगला सुख दाता।।

श्री भैरव तारा जग तारिनि।
छिन्नभाल भव दुःख निवारिनि।।
केहरि बाहन सोह भवानी।
लांगुर बीर चलत अगवानी।।
कर में खप्पर खड़ग बिराजै।
जाको देख काल ड़र भाजै।।
सोहै अस्त्र और तिरसूला।
जाते उठत सत्रु हिय सूला।।
नगरकोट में तुम्ही बिराजत।
तिहूँ लोक में ड़ंका बाजत।।
सुंभ निसुंभ दानव तुम मारे।
रक्त बीज संखन संहारे।।

महिषासुर नृप अति अभिमानी।
जेहि अघ भार मही अकुलानी।।
रूप कराल काली को धारा।
सेन सहित तुम तिहि संहारा।।

परी गाढ़ संतन पर जब जब।
भई सहाय मातु तुम तब तब।।
अमर पुरी औरों सब लोका।
तव महिमा सब रहै असोका।।
ज्वाला में है ज्योति तुम्हारी।
तुम्हें सदा पूजें नरनारी।।
प्रेम भक्ति से जो जस गावै।
दु:ख दारिद्र निकट नहि आवै।।

ध्यावे तुम्हें जो नर मन लाई।
जन्म मरन ताको छुटि जाई।।
जोगी सुर मुनि कहत पुकारी।
जोग न हो बिन सक्ति तुम्हारी।।
संकर आचारज तप कीन्हो।
काम क्रोध जीति सब लीन्हो।।
निसिदिन ध्यान धरो संकर को।
काहु काल नहि सुमिरो तुमको।।
सक्ति रूप को मरम न पायो।
सक्ति गई तब मन पछितायो।।
सरनागत ह्वै कीर्ति बखानी।
जय जय जय जगदंब भवानी।।

भई प्रसन्न आदि जगदंबा।
दई सक्ति नहि कीन्ह बिलंबा।।
मोको मातु कष्ट अति घेरो।
तुम बिन कौन हरे दु:ख मेरो।।
आसा तृस्ना निपट सतावै।
रिपु मूरख मोहि अति ड़रपावै।।
सत्रु नास कीजै महरानी।
सुमिरौं एकचित तुमहि भवानी।।

करौ कृपा हे मातु दयाला।
ऋद्धि सिद्धि दे करहु निहाला।।
जब लगि जियौं दयाफल पाऊँ।
तुम्हरौ जस मैं सदा सुनाऊँ।।

दुर्गा चालीसा जो कोई गावै।
सब सुख भोग परम पद पावै।।
देवीदास सरन निज जानी।
करहु कृपा जगदंब भवानी।।

□

श्रीहनुमान चालीसा

श्रीगुरु चरन सरोज रज, निज मनु मुकुरु सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु, जो दायकु फल चारि।।
बुद्धिहीन तनु जानिके, सुमिरौं पवन-कुमार।
बल बुधि बिद्या देहु मोहिं, हरहु कलेस बिकार।।

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर।
जय कपीस तिहुँ लोक उजागर।।

राम दूत अतुलित बल धामा।
अंजनि-पुत्र पवनसुत नामा।।
महाबीर बिक्रम बजरंगी।
कुमति निवार सुमति के संगी।।
कंचन बरन बिराज सुबेसा।
कानन कुंड़ल कुंचित केसा।।
हाथ बज्र औ ध्वजा बिराजै।
काँधे मूँज जनेऊ साजै।।
संकर सुवन केसरीनंदन।
तेज प्रताप महा जग बंदन।।
बिद्यावान गुनी अति चातुर।
राम काज करिबे को आतुर।।

प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया।
राम लखन सीता मन बसिया।।
सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा।
बिकट रूप धरि लंक जरावा।।
भीम रूप धरि असुर सँहारे।
रामचंद्र के काज सँवारे।।
लाय संजीवन लखन जियाये।
श्रीरघुबीर हरषि उर लाये।।
रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई।
तुम मम प्रिय भरतहिं सम भाई।।
सहस बदन तुम्हरो जस गावै।
अस कहि श्रीपति कंठ लगावै।।
सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा।
नारद सारद सहित अहीसा।।
जम कुबेर दिग्पाल जहाँ ते।
कबि कोबिद कहि सके कहाँ ते।।
तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा।
राम मिलाय राज पद दीन्हा।।
तुम्हरो मंत्र बिभीषन माना।
लंकेस्वर भए सब जग जाना।।
जुग सहस्त्र जोजन पर भानू।
लील्यो ताहि मधुर फल जानू।।
प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माहीं।
जलधि लाँघि गये अचरज नाहीं।।
दुर्गम काज जगत के जेते।
सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते।।
राम दुआरे तुम रखवारे।
होत न आज्ञा बिनु पैसारे।।

सब सुख लहै तुम्हारी सरना।
तुम रच्छक काहू को ड़र ना।।
आपन तेज सम्हारो आपै।
तीनों लोक हाँक तें काँपै।।
भूत पिसाच निकट नहिं आवै।
महाबीर जब नाम सुनावै।।
नासै रोग हरै सब पीरा।
जपत निरंतर हनुमत बीरा।।
संकट तें हनुमान छुड़ावै।
मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।
सब पर राम तपस्वी राजा।
तिन के काज सकल तुम साजा।।
और मनोरथ जो कोइ लावै।
सोइ अमित जीवन फल पावै।।
चारों जुग परताप तुम्हारा।
है परसिद्ध जगत उजियारा।।
साधु संत के तुम रखवारे।
असुर निकंदन राम दुलारे।।
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता।
अस बर दीन जानकी माता।।
राम रसायन तुम्हरे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।
तुम्हरे भजन राम को पावै।
जनम जनम के दुख बिसरावै।।
अंत काल रघुबर पुर जाई।
जहाँ जन्म हरि-भक्त कहाई।।
और देवता चित्त न धरई।
हनुमत सेइ सर्ब सुख करई।।

संकट कटै मिटै सब पीरा।
जो सुमिरै हनुमत बलबीरा।।
जै जै जै हनुमान गोसाईं।
कृपा करहु गुरु देव की नाईं।।
जो सत बार पाठ कर कोई।
छूटहि बंदि महा सुख होई।।
जो यह पढ़ै हनुमान चलीसा।
होय सिद्धि साखी गौरीसा।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा।
कीजै नाथ हृदय महँ ड़ेरा।।

पवन तनय संकट हरन, मंगल मूरति रूप।
राम लखन सीता सहित, हृदय बसहु सुर भूप।।

□

भजनमाला

भय प्रगट कृपाला दीनदयाला...

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौशल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनिमनहारी अद्‌भुत रूप निहारी।।
लोचन अभिरामा तन घनश्यामा निज आयुध भुजचारी।
भूषण वनमाला नयन विशाला शोभा सिंधु खरारी।।
कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि विधि करौं अनंता।
माया गुन ज्ञानातीत अमाना वेद पुराण भनंता।।
करुणा सुख सागर सब गुण आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो ममहित लागी जन अनुरागी प्रगट भए श्रीकंता।।
ब्रह्मांड़ निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रतिवेद कहै।
सो मम उरवासी यह उपहान सुनत धीर मति थिर न रहै।।
उपजा जब ज्ञाना प्रभु मुसकाना चरित बहुत विधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मात बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै।।
माता पुनि बोली सो मति ड़ोली तजहु तात यह रूपा।
कीजे शिशुलीला अतिप्रिय शीला यह सुख परम अनूपा।।
सुनि वचन सुजाना रोदन ठाना होय बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं तेन परहिं भवकूपा।।
विप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुण गोपार।।

□

तोरा मन दरपन कहलाए

तोरा मन दरपन कहलाए,
भले-बुरे सारे कर्मों को, देखे और दिखाए।
मन ही देवता, मन ही ईश्वर, मन से बड़ा न कोय
मन उजियारा जब-जब फैले, जग उजियारा होय,
इस उजले दरपन पर प्राणी, धूल न जमने पाए।
तोरा मन···

सुख की कलियाँ, दुःख के काँटे, मन सबका आधार
मन से कोई बात छुपे न, मन के नयन हजार,
जग से चाहे भाग ले कोई, मन से भाग न पाए।
तोरा मन···

तन की दौलत ढलती छाया, मन का धन अनमोल
तन के कारण मन के धन को, मत माटी में रोल,
मन की कदर भुलानेवाला, हीरा जनम गँवाए।
तोरा मन···

□

माटी कहे कुम्हार से

माटी कहे कुम्हार से, तू क्या रौंदे मोय।
इक दिन ऐसो आएगो, में रोंदूँगी तोय।।

आया है तो जाएगा राजा रंक फकीर।
एक सिंहासन चढ़ चले एक बँधे जंजीर।।

निर्बल को न सताइए जाकी मोटी हाय।
मुए खाल की स्वाँस सों सार भस्म हो जाय।।

चलती चक्की देखकर दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में साबुत बचा न कोय।।

कबिरा खड़ा बजार में सबकी माँगे खैर।
ना काहू से दोस्ती ना काहू से बैर।।

बड़ा हुआ तो क्या हुआ जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं फल लागै अति दूर।।

रहिमन देखि बड़े न कों, लघु न दीजिए ड़ार।
जहाँ काम आवै सुई कहा करै तलवार।।

रहिमन धागा प्रेम का मत तोड़ो चटकाय।
टूटे से फिर ना जुड़े, जुड़े गाँठ पड़ जाय।।

तुलसी इस संसार में सब से मिलिए धाय।
ना जाने किस भेष में नारायण मिल जाय ।।

दुःख में सुमिरन सब करें, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे तो दुःख काहे को होय।।

कहना था जो कह दिया अब कछु कहा न जाय।
एक गया दूजा रहा दरिया लहर समाय।।

□

ऐ मालिक तेरे बंदे हम

ऐ मालिक तेरे बंदे हम
ऐसे हों हमारे करम
नेकी पर चलें और बदी से टलें
ताकि हँसते हुए निकले दम, ऐ मालिक···

बड़ा कमजोर है आदमी
अभी लाखों हैं इसमें कमी
पर तू जो खड़ा, है दयालू बड़ा
तेरी कृपा से धरती थमीं, दिया तूने हमें जब जनम
तू ही झेलेगा हम सबके गम
नेकी पर चलें, और बदी से टलें
ताकि हँसते हुए निकले दम, ऐ मालिक···

ये अँधेरा घना छा रहा
तेरा इनसान घबरा रहा
हो रहा बेखबर
कुछ न आता नजर
सुख का सूरज छुपा जा रहा
है तेरी रोशनी में जो दम
तो अमावस को कर दे पूनम
नेकी पर चलें, और बदी से टलें
ताकि हँसते हुए निकले दम, ऐ मालिक··· □

उठ जाग मुसाफिर भोर भई

उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो सोवत है सो खोवत है,
जो जागत है सो पावत है। उठ जाग···

टुक नींद से अँखियाँ खोल जरा,
ओ गाफिल रब से ध्यान लगा।
यह प्रीत करन की रीत नहीं,
रब जागत है तू सोवत है। उठ जाग···

नादान भुगत करनी अपनी,
ओ पापी पाप में चैन कहाँ।
जब पाप की गठरी शीश धरी,
फिर शीश पकड़ क्यों रोता है। उठ जाग···

जो कल करना सो आज कर ले,
जो आज करना सो अब कर ले।
जब चिड़ियन खेती चुग ड़ाली,
फिर पछताए क्या होवत है। उठ जाग···

□

कभी राम बनके, कभी श्याम बनके

कभी राम बनके, कभी श्याम बनके, चले आना प्रभुजी चले आना।
चले आना प्रभुजी···
कभी राम के रूप में आना
सीता साथ लेके, धनुष हाथ लेके, चले आना प्रभुजी चले आना।
चले आना प्रभुजी···
कभी श्याम के रूप में आना
राधा साथ लेके, मुरली हाथ लेके, चले आना प्रभुजी चले आना।
चले आना प्रभुजी···
कभी शिवजी के रूप में आना
उमा साथ ले के, डमरू हाथ लेके, चले आना प्रभुजी चले आना।
चले आना प्रभुजी···
कभी ब्रह्माजी के रूप में आना
वेद साथ लेके, शास्त्र हाथ लेके, चले आना प्रभुजी चले आना।
चले आना प्रभुजी···
कभी दुर्गा के रूप में आना
शेर साथ लेके, त्रिशूल हाथ लेके, चले आना प्रभुजी चले आना।
चले आना प्रभुजी···
कभी विष्णु के रूप में आना
लक्ष्मी साथ लेके, चक्र हाथ लेके, चले आना प्रभुजी चले आना।
चले आना प्रभुजी···

□

सीताराम, सीताराम, सीताराम कहिए

सीताराम सीताराम सीताराम कहिए।
जाहि विधि राखे राम, ताहि विधि रहिए।।
मुख में हो राम नाम, राम सेवा हाथ में।
तू अकेला नहीं प्यारे, राम तेरे साथ में।।
विधि का विधान मान, हानि-लाभ सहिए।।
जाहि विधि···
किया अभिमान तो फिर मान नहीं पाएगा।
होगा प्यारे वो ही जो श्रीरामजी को भाएगा।।
धन्यवाद निर्विवाद राम राम कहिए।।
जाहि विधि···
जिंदगी की ड़ोर सौंप हाथ दीनानाथ के।
झोंपड़ी में राखे चाहे महलों में वास दे।।
फल आशा त्याग शुभ काम करते रहिए।।
जाहि विधि···
आशा एक रामजी की, दूजी आशा छोड़ दे।
नाता एक रामजी से दूजा नाता तोड़ दे।।
काम-रस त्याग प्यारे राम-रस पगिए।।
जाहि विधि···
सीताराम सीताराम सीताराम कहिए।
जाहि विधि राखे राम, ताहि विधि रहिए।।

□

तेरा रामजी करेंगे बेड़ा पार

तेरा रामजी करेंगे बेड़ा पार,
उदासी मन काहे को करे।
नैया तेरी राम हवाले।
लहर लहर हरि आप सँभाले।।
हरि आप ही लगाए बेड़ा पार।
उदासी मन…
काबू में मझधार उसी के।
हाथों में पतवार उसी के।।
तेरी हार भी नहीं तेरी हार।
उदासी मन…
सहज किनारा मिल जाएगा।
परम सहारा मिल जाएगा।।
डोरी सौंप के तो देख इक बार।
उदासी मन…
तू निर्दोष तुझे डर भी क्या है।
पग-पग पर साथी ईश्वर है।।
जरा भावना से कर लो पुकार।
उदासी मन…

□

कभी-कभी भगवान को भी···

कभी-कभी भगवान को भी भक्तों से काम पड़े।
जाना था गंगा पार, प्रभु केवट की नाव चढ़े।।

अवध छोड़, प्रभु वन को धाए,
सिया-राम-लखन गंगा-तट आए,
केवट मन-ही-मन हर्षाए,
घर बैठे प्रभु दर्शन पाए,
हाथ जोड़कर प्रभु के आगे केवट मगन खड़े।
जाना था गंगा पार···

प्रभु बोले तुम नाव चलाओ,
पार हमें केवट पहुँचाओ,
केवट कहता सुनो हमारी
चरण धूल माया भारी,
मैं गरीब नैया मेरी नारी ना होय पड़े।
जाना था गंगा पार···

केवट दौड़ के जल भर लाया
चरण धोय चरणामृत पाया,
वेद ग्रंथ जिनके यश गाए
केवट उनको नाव चढ़ाए,
बरसे फूल गगन से ऐसे भक्त के भाग बड़े।
जाना था गंगा पार··· □

तेरे मन में राम

तेरे मन में राम, तन में राम
रोम-रोम में राम रे!
राम सुमिर ले, ध्यान लगा ले
छोड़ जगत् के काम रे!
बोलो राम-२ बोलो राम राम राम।
बोलो राम-२ बोलो राम राम राम।

माया में तू उलझा-उलझा, दर-दर धूल उड़ाए-२
अब करता क्यों मन भारी, जब माया साथ छुड़ाए,
दिन तो बीता दौड़-धूप में-२ ढल जाए न शाम रे!
बोलो राम-२ बोलो राम राम राम!

तन के भीतर पाँच लुटेरे डाल रहे हैं डेरा-२
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह ने तुझको ऐसा घेरा,
भूल गया तू राम रटन-२ भूला पूजा का काम।
बोलो राम-२ बोलो राम राम राम!

बचपन बीता खेल-खेल में, भरी जवानी सोए,
देख बुढ़ापा अब क्या सोचे, क्या पाया क्या खोए।
देर नहीं है अब भी बंदे, ले ले उसका नाम रे!
बोलो तेरे···

□

पायो जी मैंने···

पायो जी मैंने राम-रतन धन पायो।।
वस्तु अमोलक दी मेरे सतगुरु,
किरपा कर अपनायो।। १।।
जनम जनम की पूँजी पाई,
जग में सभी खोवायो।। २।।
खरचै न खूटै, वाको चोर न लूटै,
दिन दिन बढ़त सवायो।। ३।।
सत की नाव खेवटिया सतगुरु,
भवसागर तर आयो।। ४।।
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर
हरख हरख जस गायो।। ५।।

□

भजो रे मन गोविंदा···

भजो रे मन गोविंदा, नटवर नागर नंदा। भजो रे···
आप ही नटवर, आप ही नागर, आप ही बाल मुकुंदा। भजो रे···
सब ग्वालों में कृष्ण बड़े हैं
ज्यों तारों में चंदा। भजो रे···
सब सखियों में राधा बड़ी हैं
ज्यों नदियों में गंगा। भजो रे···
परम पिता को भूल के मूरख
क्यों होता शर्मिंदा। भजो रे···
हरदम भजन उसी का करना
तजकर पाप का धंधा। भजो रे···
जिसने कृष्ण नाम नहीं गाया
तिसको दे यम दंडा। भजो रे···
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर
काटो यम का फंदा। भजो रे···

□

मुकुंद माधव गोविंद बोल

मुकुंद माधव गोविंद बोल,
केशव माधव हरि हरि बोल।
राम राम बोल, राम राम बोल,
शिव शिव बोल, शिव शिव बोल।।

कृष्ण कृष्ण बोल, कृष्ण कृष्ण बोल,
ओ३म् ओ३म् बोल, ओ३म् ओ३म् बोल।
मुकुंद माधव गोविंद बोल,
केशव माधव हरि हरि बोल।।

गोविंद जै जै, गोपाल जै जै,
राधा रमण हरि गोविंद जै जै।
गोविंद जै जै, गोपाल जै जै,
राधा रमन हरि गोविंद जै जै।।

□

यशोमति मैया से बोले

यशोमति मैया से बोले नंदलाला
राधा क्यों गोरी मैं क्यों काला···
बोली मुसकाती मैया ललन को बताया,
काली अँधियारी आधी रात में तू आया।
लाड़ला कन्हैया मेरा··हो···
काली कमलीवाला इसीलिए काला।
यशोमति···
बोली मुसकाती मैया सुनो मेरे प्यारे,
गोरी गोरी राधिका के नैन कजरारे।
काले नैनोंवाली ने हो··हो···
ऐसा जादू डाला, इसीलिए काला।
यशोमति···

□

तूने मुझे बुलाया

साँची जोताँवाली माता
तेरी जय-जयकार, जय-जयकार

तूने मुझे बुलाया शेराँवालिए
मैं आया, मैं आया शेराँवालिए
ओ जोताँवालिए, पहाड़ावालिए, ओ मेहराँवालिए
सारा जग है एक बंजारा,
सबकी मंजिल तेरा द्वारा
ऊँचे पर्वत लंबा रस्ता
पर मैं रह न पाया शेराँवालिए
तूने मुझे बुलाया शेराँवालिए।
सूने मन में जल गई बाती
तेरे पथ में मिल गए साथी
मुँह खोलूँ क्या तुझसे माँगूँ
बिन माँगे सब पाया शेराँवालिए!

कौन है राजा कौन भिखारी
एक बराबर तेरे सारे पुजारी
तूने सबको दर्शन देके
अपने गले लगाया शेराँवालिए
तूने मुझे बुलाया शेराँवालिए!
ओ जोताँवालिए, पहाड़ावालिए, ओ मेहराँवालिए □

वर दे, वर दे वीणावादिनि

जय-जय माँ, जय-जय माँ, जय-जय माँ, जय-जय माँ
जय-जय माँ, जय-जय माँ, जय-जय माँ, जय-जय माँ
वर दे, वर दे। वर दे, वर दे

वीणा वादिनी वर दे,
जय-जय माँ, जय-जय माँ, जय-जय माँ, जय-जय माँ,
निर्मल मन कर दे प्रेम अतुल भर दे,
सबकी सफल मति हो ऐसा हमको वर दे।
वर दे, वर दे। वर दे, वर दे

वीणा वादिनी वर दे,
जय-जय माँ, जय-जय माँ, जय-जय माँ, जय-जय माँ
सत्यमयी तू है, ज्ञानमयी तू है। सत्यमयी तू है, ज्ञानमयी तू है
प्रेममयी भी तू है हम बच्चों को वर दे,
वर दे, वर दे। वर दे, वर दे

सरस्वती भी तू है, महालक्ष्मी तू है, महाकाली भी तू है
हम भक्तों को वर दे, वर दे, वर दे, वर दे
वर दे, वर दे, वर दे!

□

मंगल भवन अमंगल हारी

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवहु सो दसरथ अजिर बिहारी।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

होइ हैं सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तरक बढ़ावे साखा।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

धीरज धरम मित्र अरु नारी।
आपद काल परखिए चारी।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू।
सो तेहि मिलहि न कछु संदेहू।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

जाकी रही भावना जैसी।
प्रभु मूरति देखी तिन तैसी।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

रघुकुल रीत सदा चलि आई।
प्राण जाय पर बचन न जाई।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

हरि अनंत हरि कथा अंनता।
कहहि सुनहि बहु विधि सब संता।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

बूँद आघात गिरि सहिं कैसे?
खल के वचन संत सहिं जैसे।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

रावन रथी बिरथ रघुबीरा।
देख बिभीषन भयऊ अधीरा।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

तेज पुंज रथ दिव्य अनूपा।
हरषि चढ़ऊ कौसलपुर भूपा।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

दैहिक दैविक भौतिक तापा।
रामराज काहू नहिं व्यापा।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

उमा कहउ मैं अनुभव अपना।
सत हरि भजन जगत् सब सपना।।
राम सियाराम सियाराम जय जय राम!

□

जोत से जोत जलाते चलो

जोत से जोत जलाते चलो, प्रेम की गंगा बहाते चलो,
राह में आए जो दीन दुःखी, सबको गले से लगाते चलो।
जिसका न कोई संगी साथी, ईश्वर है रखवारा,
जो निर्धन है जो निर्बल है, वो है प्रभु का प्यारा।
प्यार के मोती लुटाते चलो, प्रेम की गंगा बहाते चलो।

आशा टूटी, ममता रूठी, छूट गया है किनारा,
बंद करो मत द्वार दया का, दे दो कुछ तो सहारा।
दीप दया का जलाते चलो, प्रेम की गंगा बहाते चलो।

छाया है चहुँओर अँधेरा, भटक गई हैं दिशाएँ,
मानव बन बैठा है दानव, किसको व्यथा सुनाएँ।
धरती को स्वर्ग बनाते चलो, प्रेम की गंगा बहाते चलो।

भक्ति शक्ति है कर्म धर्म है ज्ञान मुक्ति का पथ है,
आत्मा की अनंत यात्रा में यह तन तो बस पथ है।
पथ अनेक हैं रथ अनेक हैं, एक ही लक्ष्य दिखाते चलो,
उस विराट् में हो विलीन तुम, नित्य ही अलख जगाते चलो।

कौन है ऊँचा कौन है नीचा सबमें वो ही समाया,
भेदभाव के झूठे भरम में ये मानव भरमाया।
धर्म ध्वजा फहराते चलो, प्रेम की गंगा बहाते चलो।

सारे जग के कण-कण में दिव्य अमर एक आत्मा,
एक ब्रह्मा है एक सत्य है एक ही है परमात्मा।
प्राणों में प्राण मिलाते चलो, प्रेम की गंगा बहाते चलो,
जोत से जोत जलाते चलो, प्रेम की गंगा बहाते चलो।

□

अब सौंप दिया इस जीवन का

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारे हाथों में।
है जीत तुम्हारे हाथों में, है हार तुम्हारे हाथों में।।

मेरा निश्चय है एक यही, इक बार तुम्हें पा जाऊँ मैं।
अर्पण कर दूँ जगती भर का, सब प्यार तुम्हारे हाथों में।।

इस और जग में रहूँ तो ऐसे रहूँ,, ज्यो जल में कमल का फूल खिले।
मैं हूँ संसार के हाथों में, और संसार तुम्हारे हाथों में।।

यदि मानुष का ही मुझे जन्म मिले, तब हरि चरणों का पुजारी बनूँ।
मुझ पूजक की इक-इक रग का, हो तार तुम्हारे हाथों में।।

जब-जब संसार का बंदी बन, दरबार में तेरे आऊँ मैं।
हो मेरे पापों का निर्णय, सरकार तुम्हारे हाथों में।।

मुझमें तुझमें है भेद यही, मैं नर हूँ तू नारायण है।
मैं हूँ संसार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथों में।।

□

मैली चादर ओढ़

मैली चादर ओढ़ के कैसे द्वार तुम्हारे आऊँ,
हे पावन परमेश्वर मेरे मन ही मन शरमाऊँ।
मैली चादर···

तूने मुझको जग में भेजा निर्मल देकर काया,
आकर के संसार में मैंने इसको दाग लगाया।
जनम-जनम की मैली चादर कैसे दाग छुड़ाऊँ?
मैली चादर···

निर्मल वाणी पाकर तुझसे, नाम ना तेरा गाया,
नैन मूँदकर हे परमेश्वर, कभी न तुझको ध्याया।
मन वीणा की तारें टूटीं अब क्या गीत सुनाऊँ?
मैली चादर···

इन पैरों से चलकर तेरे, मंदिर कभी न आया,
जहाँ-जहाँ हो पूजा तेरी, कभी न शीश झुकाया।
हे हरिहर मैं हार के आया अब क्या हार चढ़ाऊँ?
मैली चादर···

□

सरस्वती वंदना

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना।
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती नि:शेष जाड्यापहा॥ १ ॥

आशासु राशीभवदंगवल्ली
भासैव दासीकृतदुग्धसिन्धुम्।
मन्दस्मितैर्निन्दितशारदेन्दुं
वन्देऽरविन्दासनसुन्दरित्वाम् ॥ २ ॥

शारदा शारदाम्भोजवदना वदनाम्बुजे।
सर्वदा सर्वदास्माकं सन्निधिं सन्निधिं क्रियात्॥ ३ ॥

सरस्वती च तां नौमि वागधिष्ठातृदेवताम्।
देवत्वं प्रतिपद्यन्ते यदनुग्रहतो जना: ॥ ४ ॥

पातु नो निकषग्रावा मतिहेम्न: सरस्वती।
प्राज्ञेतरपरिच्छेदं वचसैव करोति या॥ ५ ॥

शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जाड्यान्धकारापहाम्।
हस्ते स्फटिकमालिकां च दधतीं पद्मासनेसंस्थितां
वन्दे तां परमेश्वरीं भवगतीं बुद्धिप्रदां शारदाम्॥ ६ ॥

वीणाधरे विपुलमङ्गलदानशीले
भक्तार्तिनाशिनि विरञ्चिहरीशवन्द्ये।
कीर्तिप्रदेऽखिलमनोरथदे महार्हे
विद्याप्रदायिनि सरस्वति नौमि नित्यम्॥ ७॥

श्वेताब्जपूर्णविमलासनसंस्थिते हे
श्वेताम्बरावृतमनोहरमञ्जुमात्रे।
उद्यन्मनोज्ञसितपङ्कजमञ्जु लास्ये
विद्याप्रदायिनि सरस्वति नौमि नित्यम्॥ ८॥

मातस्त्वदीयपदपङ्कजभक्तियुक्ता
ये त्वां भजन्ति निखिलानपरान्विहाय।
ते निर्जरत्वमिह यान्ति कलेवरेण
भूवह्निवायुगगनाम्बुविनिर्मितेन॥ ९॥

मोहान्धकारभरिते हृदये मदीये
मात: सदैव कुरु वासमुदारभावे।
स्वीयाखिलावयननिर्मलसुप्रभाभि:
शीघ्रं विनाशाय मनोगतमन्धकारम्॥ १०॥

ब्रह्मा जगत् सृजति पालयतीन्दिरेश:
शम्भुर्विनाशयति देवि तव प्रभावै:।
न स्यात्कृपा यदि तव प्रकटप्रभावे
न स्यु: कथञ्चिदपि ते निजकार्यदक्षा:॥ ११॥

लक्ष्मीर्मेधा धरा पुष्टिगौरी तुष्टि: प्रभा धृति:।
एताभि: पाहि तनुभिरष्टाभिर्मा सरस्वति:॥ १२॥

सरस्वत्यै नमो नित्यं भद्रकाल्यै नमो नम:।
वेदवेदान्तवेदांगविद्यास्थानेभ्य एव च॥ १३॥

सरस्वति महाभागे विद्ये कमललोचने।
विद्यारूपे विशालाक्षि विद्यां देहि नमोस्तुते॥ १४॥

यदक्षरं परं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि:॥ १५॥

□

इतनी शक्ति हमें देना दाता

इतनी शक्ति हमें देना दाता, मन का विश्वास कमजोर हो ना
हम चलें नेक रस्ते पे हमसे भूलकर भी कोई भूल हो ना

दूर अज्ञान के हों अँधेरे, तू हमें ज्ञान की रोशनी दे
हर बुराई से बचते रहें हम, जितना भी दे भली जिंदगी दे
बैर हो ना किसी का किसी से, भावना मन में बदले की हो ना
हम चलें नेक···

हम न सोचें हमें क्या मिला है, हम ये सोचें किया क्या है अर्पण
फूल खुशियों के बाँटे सभी को, सबका जीवन ही बन जाए मधुबन
अपनी करुणा का जल तू बहा दे, कर दे पावन हर एक मन का कोना
हम चलें नेक···

हम अँधेरे में हैं रोशनी दें, खो न दें खुद को ही दुश्मनी से
हम सजा पाएँ अपने किए की, मौत भी हो तो सह लें खुशी से
कल जो गुजरा है फिर से ना गुजरे, आनेवाला कल ऐसा हो ना
हम चलें नेक···

हर तरफ जुल्म है बेबसी है, सहमा-सहमा सा हर आदमी है
पाप का बोझ बढता ही जाए, जाने कैसे ये धरती थमी है
बोझ बरदाश्त का तू उठा ले, तेरी रचना का ही अंत हो ना
हम चलें नेक··· ☐

मन मैला और तन को धोए

मन मैला और तन को धोए,
मन मैला और तन को धोए।

फूल को चाहे काँटे बोए, काँटे बोए···

मन मैला और तन को धोए,
मन मैला और तन को धोए,
फूल को चाहे काँटे बोए, काँटे बोए···

करे दिखावा भक्ति का क्यों
उजली उढे चदरिया
भीतर से मन साफ किया ना,
बाहर माँजे घड़िया

परमेश्वर नित द्वार पे आया,
परमेश्वर नित द्वार पे आया,
तू भोला रहा सोए,

मन मैला और तन को धोए,
मन मैला और तन को धोए,

कभी ना मन-मंदिर में तूने
प्रेम की ज्योत जलाई,
सुख पाने तू दर-दर भटके,
जन्म हुआ दुःखदाई,

अब भी नाम सुमिर ले हरि का,
अब भी नाम सुमिर ले हरि का,
जन्म व्यर्थ क्यों खोए,

मन मैला और तन को धोए,
मन मैला और तन को धोए,

साँसों का अनमोल खजाना
दिन-दिन लुटा जाए,
मोती लेने आया तट पे
सीप से मन बहलाए,

साँचा सुख तो वो ही पाए,
साँचा सुख तो वो ही पाए,

शरण प्रभु की होए
शरण प्रभु की होए।

मन मैला और तन को धोए
मन मैला और तन को धोए,

फूल को चाहे काँटे बोए,
मन मैला और तन को धोए,
मन मैला और तन को धोए।

□

दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया

दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया··दुनिया
राम एक देवता पुजारी सारी दुनिया
पुजारी सारी दुनिया···
दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया
दाता एक राम···
द्वारे पे उसके जाके कोई भी पुकारता··पुकारता
परम कृपा दे अपनी भव से उबारता··उबारता
ऐसे दीनानाथ पे बलिहारी सारी दुनिया,
दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया।
दाता एक राम···
दो दिन का जीवन प्राणी कर ले विचार तू,
कर ले विचार तू।

प्यारे प्रभु को अपने मन में निहार तू
मन में निहार तू···
बिना हरि नाम के दुखियारी सारी दुनिया,
दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया।
दाता एक राम···

नाम का प्रकाश जब अँधेर जगाएगा,
प्यारे श्रीराम का तू दर्शन पाएगा।

ज्योति से जिसकी है उजयारी सारी दुनिया,
दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया।
दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया!

□

श्रीराधे गोविंदा मन भज ले...

जय नंदलाल जय जय, जय गोपाला जय जय!

श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है
गोपाला हरि का प्यारा नाम है, नंदलाला हरि का प्यारा नाम है।
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है।

मोर मुकुट सिर गलबन माला केसर तिलक लगाए
वृंदावन की कुंज गलिन में सबको नाच नचाए,
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है
गोपाला हरि का प्यारा नाम है, नंदलाला हरि का प्यारा नाम है।
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है

जय नंदलाल जय जय, जय गोपाला जय जय!

यमुना किनारे धेनु चरावे माधव बदन मुरारी
मधुर मुरलिया जभी बजावे हर ले सुधबुध सारी,
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है
गोपाला हरि का प्यारा नाम है, नंदलाला हरि का प्यारा नाम है।
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है

गिरिधर नागर कहती मीरा, सूर का श्यामल भाया
तुकाराम और नामदेव ने विट्ठल विट्ठल गाया,
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है
गोपाला हरि का प्यारा नाम है, नंदलाला हरि का प्यारा नाम है।
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है

जय नंदलाला जय जय, जय गोपाला जय जय!

राधा शक्ति बिना ना कोई श्यामल दर्शन पावे
आराधन कर राधे राधे कान्हा भागे आवें,
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है,
श्रीराधे गोविंदा, मन भज ले हरि का प्यारा नाम है

☐

जग में सुंदर हैं दो नाम

जग में सुंदर हैं दो नाम
चाहे कृष्णा कहो या राम
बोलो राम, राम, राम!
बोलो श्याम, श्याम, श्याम!

माखन ब्रज में एक चुरावे
एक बेर भिलनी के खावे,
प्रेमभाव से भरे अनोखे
दोनों के हैं काम
चाहे कृष्ण कहो या राम!

जग में सुंदर हैं दो नाम,
चाहे कृष्ण कहो या राम!

बोलो राम, राम, राम
बोलो श्याम, श्याम, श्याम

एक कंस पापी को मारे
एक दुष्ट रावण संहारे,
दोनों दीन के दुःख हरत हैं

दोनों बाल के धाम,
चाहे कृष्ण कहो या राम!

जग में सुंदर हैं दो नाम
चाहे कृष्ण कहो या राम!
बोलो राम, राम, राम
बोलो श्याम, श्याम, श्याम!

एक राधिका के संग राजे
एक जानकी संग बिराजे,
चाहे सीता-राम कहो
या बोलो राधे-श्याम,

जग में सुंदर हैं दो नाम
चाहे कृष्ण कहो या राम!
बोलो राम, राम, राम
बोलो श्याम, श्याम, श्याम!

एक हृदय में प्रेम बढावे,
एक तड़प संताप मिटावे,
दोनों सुख के सागर हैं
और दोनों पूरन काम,
चाहे कृष्ण कहो या राम!

जग में सुंदर हैं दो नाम
चाहे कृष्ण कहो या राम,
बोलो राम, राम, राम!
बोलो श्याम, श्याम, श्याम!

□

चदरिया झीनी रे झीनी

कबिरा जब हम पैदा हुए,
जग हँसिया, हम रोए।
ऐसी करनी कर चलो,
हम हँसे, जब रोए।।

चदरिया झीनी रे झीनी
राम नाम रस-भीनी
चदरिया झीनी रे झीनी

अष्ट-कमल का चरखा बनाया,
पाँच तत्त्व की पूनी।
नौ-दस मास बुनन को लागे,
मूरख मैली कीन्ही।।
चदरिया झीनी रे झीनी…

जब मोरी चादर बन घर आई,
रँगरेज को दीन्ही।
ऐसा रंग रँगा रंगरे ने,
के लालो लाल कर दीन्ही।।
चदरिया झीनी रे झीनी…

चादर ओढ़ शंका मत करियो,
ये दो दिन तुमको दीन्ही।
मूरख लोग भेद नहीं जाने,
दिन-दिन मैली कीन्ही।।
चदरिया झीनी रे झीनी···

ध्रुव-प्रह्लाद सुदामा ने ओढ़ी चदरिया,
शुकदे में निर्मल कीन्ही।
दास कबीरा ने ऐसी ओढ़ी,
ज्यूँ की त्यूँ धर दीन्ही।।
कि राम नाम रस-भीनी,
चदरिया झीनी रे झीनी!

□

ऐसी लागी लगन

हीरे मोती से नहीं शोभा है हाथ की
है हाथ जो भगवान् का पूजन किया करें
मरकर भी अमर नाम है उस जीव का जग में
प्रभु प्रेम में बलिदान जो जीवन किया करे

ऐसी लागी लगन···
ऐसी लागी लगन···
ऐसी लागी लगन लागी-लागी रे लगन

ऐसी लागी लगन मीरा हो गई मगन
वो तो गली-गली हरी गुण गाने लगी

महलों में पली बनके जोगन चली
मीरा रानी दीवानी कहने लगी

ऐसी लागी लगन मीरा हो गई मगन
वो तो गली-गली हरी गुण गाने लगी

कोई रोके नहीं कोई टोके नहीं
मीरा गोविंद गोपाला गाने गली
कोई रोके···नहीं
कोई टोके···नहीं
मीरा गोविंद गोपाला गाने लगी
बैठे संतों के संग रँगे मोहन के रंग
मीरा प्रेमी प्रीतम को मनाने लगी

वो तो गली-गली हरी गुण गाने˙˙˙लगी

ऐसी लागी लगन मीरा हो गई मगन
वो तो गली गली-गली गली हरी हरी गुण गाने लगी
महलों में पली बनके जोगन चली
मीरा रानी दीवानी कहने लगी
ऐसी लागी लगन

राणा ने विष दिया मानो अमृत पिया
पानी दानी पा दा मापा गामा रीगा
सा रे गा पा मापागामा रीमा
गामा रीगा सागा रीगा
सारी नीनी सारी नीसा नीपा
गारी नी पा
सा सा नी सा सा नी
सा सा री सा सा नी
सा सा री सा सा नी
सा सा गा सा सा नी
सा सा री सा सा नी
सा दा पा सा सा नी
सा सा गा गग गा मा मा पा पा पा

राणा न विष दिया मानो अमृत पिया
मीरा सागर में सरिता समाने लगी
दुःख लाखों सहे मुँह से गोविंद कहे
मीरा गोविंद गोपाला गाने लगी
वो तो गली-गली हरी गुण गाने लगी
महलों में पली बनके जोगन चली
मीरा रानी दीवानी कहने लगी,
ऐसी लागी लगन मीरा हो गई मगन! □

इतना तो करना स्वामी, जब प्राण तन से निकले

इतना तो करना स्वामी, जब प्राण तन से निकले
गोविंद नाम लेके, तब प्राण तन से निकले।
श्री गंगाजी का तट हो, जमुना का वंशीकट हो
मेरा साँवरा निकट हो, जब प्राण तन से निकले।
श्री वृंदावन का तल हो, मेरे मुख में तुलसीदल हो
विष्णु चरण का जल हो, जब प्राण तन से निकले।
पीतांबरी कसी हो, छवि मन में ये बसी हो
होठों पे कुछ हँसी हो, जब प्राण तन से निकले।
मेरा प्राण निकले सुख से, तेरा नाम निकले मुख से
बच जाऊँ घोर दुःख से, जब प्राण तन से निकले।
जब प्राण कंठ आए, कोई रोग न सताए
यम दरस न दिखाए, जब प्राण तन से निकले।
उस वक्त जल्दी आना, नहीं श्याम भूल जाना
राधे को साथ लाना, जब प्राण तन से निकले।
एक भक्त की है अर्जी, खुदगर्ज की है गरजी
आगे तुम्हारी मर्जी, जब प्राण तन से निकले।

□

जानने योग्य विशेष बातें

चार युग

१. सत्य युग (१७,२८,००० वर्ष)
२. त्रेता युग (१२,९६,००० वर्ष)
३. द्वापर युग (८,६४,००० वर्ष)
४. कलियुग (४,३२,००० वर्ष)

चार आश्रम

१. ब्रह्मचर्य आश्रम
२. गृहस्थ आश्रम
३. वानप्रस्थ आश्रम
४. संन्यास आश्रम

चार वेद

१. ऋग्वेद
२. यजुर्वेद
३. सामवेद
४. अथर्ववेद

चार धाम

१. बदरीनाथ (उत्तराखंड)
२. रामेश्वरम् (तमिलनाडु)
३. जगन्नाथ पुरी (उड़ीसा)
४. द्वारिकाधीश (गुजरात)

सप्त पुरियाँ

१. अयोध्या
२. मथुरा
३. माया
४. काशी
५. कांची
६. उज्जैन
७. द्वारका

दस अवतार

१. मत्स्यावतार
२. कूर्मावतार
३. वाराहावतार
४. नृसिंहावतार
५. वामनावतार
६. परशुरामावतार
७. रामावतार
८. कृष्णावतार

९. बुद्धावतार
१०. कल्कि अवतार

बारह ज्योतिर्लिंग

१. सोमनाथ (सौराष्ट्र, गुजरात)
२. मल्लिकार्जुन (आंध्र प्रदेश)
३. महाकालेश्वर (उज्जयिनी, म.प्र.)
४. ओंकारेश्वर (म.प्र.)
५. केदारनाथ (उत्तराखंड)
६. भीमाशंकर (महाराष्ट्र)
७. काशी विश्वनाथ (वाराणसी)
८. त्र्यंबकेश्वर (नासिक, महाराष्ट्र)
९. वैद्यनाथ (देवघर, झारखंड)
१०. नागेश्वर (दारुका वन, गुजरात)
११. रामेश्वरम् (तमिलनाडु)
१२. घृष्णेश्वर(औरंगाबाद, महाराष्ट्र)

अठारह पुराण

१. ब्रह्मपुराण
२. पद्मपुराण
३. विष्णुपुराण
४. वायुपुराण
५. भागवतपुराण
६. नारदीयपुराण
७. मार्कंडेय पुराण
८. अग्निपुराण
९. भविष्यपुराण
१०. ब्रह्मवैवर्तपुराण
११. लिंगपुराण
१२. वाराहपुराण
१३. स्कंदपुराण
१४. वामनपुराण
१५. कूर्मपुराण
१६. मत्स्यपुराण
१७. गरुड़पुराण
१८. ब्रह्मांडपुराण

अठारह उपपुराण

१. सनत्कुमारपुराण
२. बृहन्नारदीयपुराण
३. आदित्यपुराण
४. सूर्यपुराण
५. नंदिकेश्वरपुराण
६. कौर्मपुराण
७. भागवतपुराण
८. वसिष्ठपुराण
९. भार्गवपुराण
१०. मुद्‌गलपुराण
११. कल्किपुराण
१२. देवीपुराण
१३. महाभागवतपुराण
१४. बृहद्धर्मपुराण
१५. परानंदपुराण
१६. वह्निपुराण
१७. पशुपतिपुराण
१८. हरिवंशपुराण

इक्यावन शक्तिपीठ

१. किरीट शक्तिपीठ
२. कात्यायनी शक्तिपीठ
३. करवीर शक्तिपीठ
४. श्रीपर्वत शक्तिपीठ
५. विशालाक्षी शक्तिपीठ
६. गोदावरी तट शक्तिपीठ
७. शुचींद्रम् शक्तिपीठ
८. पंच सागर शक्तिपीठ
९. ज्वालामुखी शक्तिपीठ
१०. भैरव पर्वत शक्तिपीठ
११. अट्टहास शक्तिपीठ
१२. जनस्थान शक्तिपीठ
१३. कश्मीर शक्तिपीठ या अमरनाथ शक्तिपीठ
१४. नंदीपुर शक्तिपीठ
१५. श्रीशैल शक्तिपीठ
१६. नलहटी शक्तिपीठ
१७. मिथिला शक्तिपीठ
१८. रत्नावली शक्तिपीठ
१९. अंबाजी शक्तिपीठ
२०. जालंधर शक्तिपीठ
२१. रामागरि शक्तिपीठ
२२. वैद्यनाथ शक्तिपीठ
२३. वक्त्रोश्वर शक्तिपीठ
२४. कण्यकाश्रम कन्याकुमारी शक्तिपीठ
२५. बहुला शक्तिपीठ
२६. उज्जयिनी शक्तिपीठ
२७. मणिवेदिका शक्तिपीठ
२८. प्रयाग शक्तिपीठ
२९. विरजाक्षेत्र, उत्कल शक्तिपीठ
३०. कांची शक्तिपीठ
३१. कालमाधव शक्तिपीठ
३२. शोण शक्तिपीठ
३३. कामाख्या शक्तिपीठ
३४. जयन्ती शक्तिपीठ
३५. मगध शक्तिपीठ
३६. त्रिस्तोता शक्तिपीठ
३७. त्रिपुरसुंदरि शक्तित्रिपुरी पीठ
३८. विभाष शक्तिपीठ
३९. देवीकूप पीठ, कुरुक्षेत्र शक्तिपीठ
४०. युगाद्या शक्तिपीठ, क्षीरग्राम शक्तिपीठ
४१. विराट का अंबिका शक्तिपीठ
४२. कालीघाट शक्तिपीठ
४३. मानस शक्तिपीठ
४४. लंका शक्तिपीठ
४५. गंडकी शक्तिपीठ
४६. गुह्येश्वरी शक्तिपीठ
४७. हिंगलाज शक्तिपीठ

४८. सुगंध शक्तिपीठ	५०. चट्टल शक्तिपीठ
४९. करतोयाघाट शक्तिपीठ	५१. यशोर शक्तिपीठ

हिंदू धर्म के कुछ प्रतीक

ओ३म् (ॐ)

ओंकार को नाद का प्रतीक माना जाता है। यह सर्वमान्य है कि सृष्टि के प्रारंभ में केवल नाद था। 'तैत्तिरियोपनिषद्' में ओ३म् को ब्रह्म माना गया है, जो सबकुछ हैं—'ओमिति ब्रह्म'। उसका समस्तपद 'ओंकार' पवित्र ध्वनि, पवित्र उद्गार 'ओ३म' का द्योतक है। भारतीय संस्कृति में किसी भी शुभ कार्य का प्रारंभ 'ओ३म्' के उच्चारण से करना परमावश्यक होता है। प्रायः सभी मंत्रों की शुरुआत भी 'ओ३म्' शब्द से ही होती है।

स्वस्तिक

संस्कृत शब्दार्थ की दृष्टि से 'स्वस्तिक' सुमंगलकारी भावों का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति में कोई भी मंगल कार्य प्रारंभ करने से पूर्व 'स्वस्तिक' चिह्न बनाने की परंपरा रही है। सर्वविदित है कि भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है, संभवतः यहीं से विश्व के अनेक देशों में इसका विस्तार हुआ होगा। 'स्वस्तिक' संस्कृत शब्द 'स्वस्ति' से निकला है। इसका अर्थ है—मंगलमय। सिंधुघाटी की सभ्यता के अवशेषों में भी यह पाया गया। कुछ विद्वान् इसे ॐ का ही विकृत रूप मानते हैं।

भारत में स्वस्तिक का रूपांकन छह रेखाओं के प्रयोग से होता है। दो रेखाओं से 'क्रास' का निर्माण; फिर उनकी चारों धुरियों से दाईं ओर बढ़ती चार रेखाएँ। इन रेखाओं को आचार्य अभिनवगुप्त ने नाद ब्रह्म अथवा अक्षर ब्रह्म का परिचायक माना है। नाद के पश्यंती, मध्यमा तथा बैखरी—तीन रूप हैं, अतः स्वस्तिक ब्रह्म का प्रतीक है।

शंख

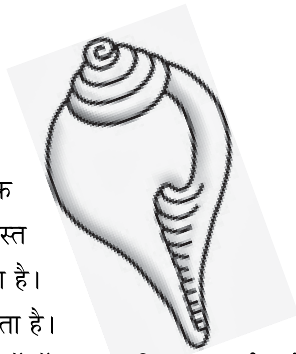

'शंख' नाद का प्रतीक है। नाद जगत् में आदि से अंत तक व्याप्त है। सृष्टि का आरंभ भी नाद से ही होता है और विलय भी उसी में होता है। दूसरे शब्दों में शंख को 'ॐ' का प्रतीक माना जाता है। इसी कारण पूजन-अर्चन आदि समस्त मांगलिक अवसरों पर शंख-ध्वनि की विशेष महत्ता है। कहा जाता है कि शंख-ध्वनि से बुरा वक्त टल जाता है। जैन, बौद्ध, शाक्त, शैव, वैष्णव आदि सभी संप्रदायों में शंख ध्वनि शुभ मानी गई है। समुद्र की लहरों में पोषित शंख, शंखासुर नामक असुर, जिसे मारने के लिए श्रीविष्णु ने मत्स्यावतार धारण किया था, के मस्तक तथा कनपटी की हड्डी का प्रतीक है। उससे निकला स्वर सत् की विजय का प्रतिनिधित्व करता है।

कलश

भारत में पूजा से पूर्व 'कलश' स्थापित किया जाता है। कथा, पूजा, विवाहादि शुभ अवसरों पर केला और पान के पत्रों से सजा जलयुक्त कलश नारियल से ढककर रखा जाता है। उसकी गरदन में बँधा कलावा यों तो कल्याण और शुभ कार्य का सूचक होता है, किंतु कलश की गरदन में बँधा वह ऐसा पाश है, जो मंगलमय आयोजन में समाज को स्नेह-सूत्र में बाँधने का द्योतक है। कलश को जल,

वायु तथा सूर्य का प्रतीक मानते हैं।

सृष्टि की उत्पत्ति के संबंध में एक रोचक कथा इस प्रकार है, 'सृष्टि के उद्‌भव से पूर्व आकाश, पर्वत, नक्षत्र, लक्ष्मी आदि सब विष्णु के उदरस्थ थे। विष्णु वर्षों तक समुद्र में निद्रामग्न रहे। तब ब्रह्म विष्णु के पेट में प्रवेश पाकर उनकी नाभि से प्रकट हुए। उन्होंने पृथ्वी, वायु, पर्वत, वृक्ष, मनुष्य, सर्प और समस्त जीवधारियों की रचना की। प्रकाश के लिए ब्रह्मा ने सूर्य का आवाहन किया। ब्रह्मा के मुख से सर्वप्रथम ऋचाएँ प्रकट हुईं, फिर यजुः, साम तथा अथर्व वेद प्रकट हुए।

रुद्राक्ष

रुद्राक्ष के उद्‌भव के विषय में 'शिवपुराण' में एक कहानी है कि सहस्रों वर्षों तक तप करने के बाद शिवजी ने जब आँखें खोलीं तो उनके चक्षुद्वय से दो बूँदें टपक पड़ीं, जो रुद्राक्ष के वृक्ष बन गए। पुराणों में ऐसा उल्लिखित है कि रुद्र का जन्म ब्रह्मा की आँखों से हुआ। वास्तव में जब शिव रौद्रावस्था में होते हैं तो वे 'रुद्र' कहलाते हैं।

रूप की दृष्टि से अनेक प्रकार के रुद्राक्ष पाए जाते हैं, जैसे—एकमुखी से चतुर्दशमुखी तक। एकमुखी तथा पंचमुखी रुद्राक्ष साक्षात् शिवस्वरूप माने जाते हैं। उनको धारण करने से भक्ति तथा मुक्ति उपलब्ध होती है। द्विमुखी रुद्राक्ष धारण करने से गोवध का पाप नष्ट हो जाता है। त्रिमुखी रुद्राक्ष धन तथा विद्या प्रदान करता है। वह लक्ष्मी या सरस्वती का प्रतीक है। चतुर्मुखी रुद्राक्ष साक्षात् ब्रह्मा है। षष्ठमुखी रुद्राक्ष दाहिनी बाँह में धारण करना चाहिए। वह स्कंद का प्रतीक है।

सप्तमुखी का प्रयोग निर्धन को भी धन-धान्य से पूरित करता है। अष्टमुखी बटुक भैरव का प्रतीक है। नवमुखी दुर्गा का प्रतीक है, दसमुखी जनार्दन का प्रतीक है तथा चतुर्दश मुखी रुद्राक्ष को मस्तक पर धारण करना चाहिए, क्योंकि यह साक्षात् आनंददाता शिव का प्रतीक माना जाता है।

पंचामृत

पूजा और पंचामृत का अन्योन्याश्रित संबंध है। पंचामृत में निम्नलिखित सामग्री होनी चाहिए—

गोदुग्धेनैव दधिना गोघृतेन समन्वितम्।
गंगाजलेन मधुना युक्तं पञ्चामृतं प्रियम्।।

अर्थात् गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, गंगाजल और शहद—इन पाँचों वस्तुओं से बना हुआ पंचामृत भगवान् को प्रिय होता है।

पंचगव्य

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पि कुशोदकम्।
निर्दिष्टं पञ्चगव्यन्तु पवित्रं मुनिपुङ्गवैः।।

अर्थात् गोमूत्र, गोबर, दूध, दही, घी और कुशोदक—ये पंचगव्य श्रेष्ठ मुनियों द्वारा पवित्र कहे गए हैं।

□

हिंदू धर्म के विज्ञान सम्मत कुछ तथ्य

'ओ३म्' की संसार में गूँज

ओ३म् (ॐ) सनातन धर्म की आत्मा है। यह एकाकी शब्द उस अनादि ध्वनि की प्रतिध्वनि है, जो सृष्टि के निर्माण के समय प्रतिध्वनित हुई थी। इस कारण इसे शब्द-ब्रह्म भी कहा गया है। ब्रह्मांड के निर्माण के समय जो ध्वनि गुंजित हुई थी, ओ३म् की ध्वनि उस गूँज के निकटतम है। जब कोई व्यक्ति एकाग्र मन से इस शब्द का सतत उच्चारण करता है तो इसकी प्रतिध्वनि की गूँज का स्पंदन उस मनुष्य के शरीर के चारों ओर एक वर्तुल घेरा बना देता है, जिसके फलस्वरूप उस व्यक्ति पर अनुकूल आध्यात्मिक प्रभाव पड़ता है। इसीलिए वैदिक मंत्रों का पहला अक्षर या शब्द 'ओ३म्' से प्रारंभ होता है। इस शब्द के उच्चारण से लयबद्ध तरंगें निकलती हैं, जिनमें सृजन शक्ति होती है और ये मनुष्य को रचनात्मक बनाती हैं। यही कारण है कि अमेरिका, इंग्लैंड, जर्मनी, जापान में लोग इसका उच्चार कर रहे हैं।

'ॐ' एक एकाक्षर मंत्र है, जिसके पीछे शाब्दिक-शक्ति (Acoustic) का विज्ञान है। वैज्ञानिक भी अब इस बात की पुष्टि करते हैं कि संसार की सृष्टि के समय एक भीषण ध्वनि पैदा हुई थी, जिसे वे अपनी आधुनिक भाषा में 'बिग-बैंग' (Big bang) के नाम से जानते हैं। भारत के मनीषियों ने इस अनादि शब्द की प्रतिध्वनि हजारों वर्षों पूर्व अपनी गूढ ध्यानावस्था में सुनी थी, जिसे उन्होंने बाद में समाज के लोगों के कल्याणार्थ मंत्र के रूप में दे दिया।

बोतल बंद गंगाजल
महीनों बाद भी दूषित नहीं होता–क्यों?

भारतवर्ष में अनेक नदियाँ हैं, जैसे—यमुना, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, सिंधु, ब्रह्मपुत्र आदि। सभी नदियों के अपने-अपने उद्‌गम स्थल हैं और बहने का अपना-अपना मार्ग, जिसे उन्होंने अपने आप अपने प्रवाह के साथ बनाया है। वेद-पुराण पढ़ने के बाद हमें ऐसा कोई प्रसंग नहीं मिलता, जिसमें यह वर्णन हो कि गंगा के अलावा किसी और नदी का उद्‌गम व मार्ग किसी व्यक्ति ने खोजा और बनाया हो। ऐसा केवल गंगा के साथ ही हुआ है। इस दृष्टि से गंगा 'नदी' नहीं है, क्योंकि एक प्राकृतिक नदी वह होती है जो स्वयं बहे। संस्कृत में 'नद' का अर्थ है—बहना। नदी शब्द भी नद से ही बना है। पर गंगा स्वयं नहीं बही, यह बहाई गई है। इसे भगीरथ ने खोजा और फिर उसका मार्ग निश्चित किया। ऐसा संसार की किसी और नदी के साथ नहीं हुआ।

कथा में आता है कि कपिल मुनि ने भगीरथ के दादा राजा सगर को कहा था कि उनके साठ हजार पुत्रों का कल्याण तभी होगा जब उनकी अस्थियाँ पवित्र जल से बहाकर समुद्र में प्रवाहित की जाएँ। राजा सगर और फिर उनके पुत्र राजा दलीप दोनों का सारा जीवन उस पवित्र जलराशि को खोजने में बीत गया, पर वे इस जलराशि को ढूँढ़ नहीं पाए। भगीरथ ने अपने पिता व दादा की खोज को आगे बढ़ाया। यदि प्रश्न केवल किसी भी जलराशि से पूर्वजों की अस्थियों को समुद्र में प्रवाहित करना होता तो फिर भगीरथ को बंगदेश से गंगोत्तरी तक जाने की आवश्यकता नहीं होती। वह मार्ग में कहीं से भी, किसी पर्वत शृंखला से किसी भी नदी को लाकर अपने पूर्वजों का तर्पण कर देते। परंतु कपिल मुनि के शाप से मुक्ति पाने के लिए भगीरथ को तो किसी विशिष्ट पवित्र जलराशि की खोज थी, जो पापनाशिनी हो। अत: ऐसी पवित्र जलराशि की खोज करते-करते भगीरथ गंगोत्तरी पहुँचे, क्योंकि मार्ग में उन्हें उनके मतलब की जलराशि कहीं नहीं मिली। इसका अर्थ यह हुआ कि गंगोत्तरी एक विशेष भौगोलिक महत्ता का स्थल है, जहाँ दैविक शक्ति प्रकृति के साथ उसे विशिष्ट बनाती हैं।

यहाँ मन में एक प्रश्न यह उठता है कि गंगोत्तरी में ऐसा क्या दैविक है,

जो कहीं और नहीं है ? भगीरथ जब गंगोत्तरी क्षेत्र में पहुँचे तो उन्होंने देखा कि वहाँ चौबीस वर्ग मील के क्षेत्र में ३०० फीट ऊँचा एक हिमखंड है, जो सदियों से अचल खड़ा है। पुराणों में इसे ही गंगा को शिव की जटाओं में बंद कहा गया है। इस हिमखंड पर सतत बृहस्पति ग्रह की तरंगें गिरती रहती हैं, जो गंगोत्तरी की विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के कारण है। बृहस्पति ग्रह की ये तरंगें यहाँ इस हिमखंड को पवित्र करती हैं और दैविक बनाती हैं, जिस कारण यह एक पवित्र खंड बन गया है। पुराणों में इसी बात को गंगा के स्वर्ग से अवतरित होना बताया गया है, क्योंकि बृहस्पति की दैविक तरंगें ऊपर (स्वर्ग) से ही तो आती हैं। बृहस्पति ग्रह से आनेवाली तरंगें विश्व में अन्यत्र किसी अन्य स्थल पर इस प्रकार नहीं गिरतीं। भगीरथ को ऐसे ही स्थल की खोज थी, जो गंगोत्तरी पर पूरी हुई।

भगीरथ ने उस हिमखंड के मूल से जल निकलने का मार्ग बनाया, जिसे गोमुख की संज्ञा दी गई। पुराणों में इसे ही शिव आराधना करके गंगा को शिव की जटाओं से धीरे-धीरे छोड़ना कहा गया है। भगीरथ ने फिर उस जलधारा का मार्ग बनाया। मार्ग के सारे अवरोधों को हटाकर गंगा को देवप्रयाग नामक स्थल पर अलकनंदा नदी से मिला दिया और आगे का मार्ग प्रशस्त किया। इस प्रकार गंगा का अवतरण हुआ।

गंगा की पवित्रता व इसके जल में पापनाशिनी तत्त्व बृहस्पति ग्रह की कॉस्मिक रेज (तरंगों) व मार्ग की हिमालय पर पाई जानेवाली खास जड़ी-बूटियों के कारण है, जो गंगाजल को वर्षों तक दूषित होने नहीं देतीं। गंगा इस प्रकार आस्था के साथ-साथ अपनी वैज्ञानिक स्थिति के कारण पवित्र व पापनाशिनी है। गंगा की पवित्रता और विशिष्टता अब तो वैज्ञानिक भी स्वीकारते हैं।

गौ-पूजन का वैज्ञानिक आधार

ओ३म् यदि सनातन धर्म की आत्मा है तो गौ उसके प्राण। भारत में गौमाता की पूजा सदा से होती आई है। हिंदू धर्मग्रंथों के अनुसार गौ भारत की ही नहीं अपितु विश्वमाता है। इसका उल्लेख हमारे वेद-पुराणों, गीता-रामायण

आदि सभी धर्मग्रंथों में मिलता है। वेदों का मानना है कि विश्व के जड़-चेतन सभी प्राणियों में कोई-न-कोई देवता वास करते हैं। परंतु गौमाता के शरीर में तो सभी देव-तत्त्व विद्यमान हैं। इसी कारण गाय को सर्वदेवमयी एवं विश्वरूपा कहा गया है। हिंदू धर्म शास्त्रों के शायद ही कोई ऐसा ग्रंथ होगा, जिसमें गौमाता की महिमा का वर्णन न किया गया हो। पुराणों में कामधेनु, नंदिनी, सुरभि, सुभद्रा, सुशीला, बहुला आदि दैविक गायों का उल्लेख मिलता है। गाय का दूध सात्त्विक गुणों को जाग्रत् करता है। देवताओं को इसके दूध का अभिषेक व इससे बने पदार्थ अत्यंत प्रिय हैं।

गाय से प्राप्त दूध, दही, घी, गोबर और गौमूत्र—ये सभी पदार्थ पवित्र हैं। इन पाँचों पदार्थों को मिलाकर 'पंचगव्य' बनाते हैं। पंचगव्य पापों का नाश करनेवाला व शुद्ध करनेवाला माना जाता है। शिव प्रिय बिल्व वृक्ष गऊमाता के गोबर से उपजा है। इस वृक्ष में माँ भगवती लक्ष्मी का निवास है। इसलिए इसे 'श्रीवृक्ष' भी कहते हैं। नीलकमल तथा रक्तकमल फूलों के बीज भी गौ के गोबर से ही उत्पन्न हुए हैं। गौमाता के मस्तक से उत्पन्न पवित्र गोरोचन सिद्धिदायक है। गुग्गल नाम का सुगंधित पदार्थ गोमूत्र से पैदा होता है। गुग्गल देवप्रिय आहार है, इसलिए हवन करते समय इसकी आहुति दी जाती है। यह आहुति देवताओं को प्रसन्न करती है और मनुष्य का कल्याण भी करती है।

गाय से संबंधित ये सभी मान्यताएँ कोई ढकोसला नहीं हैं बल्कि इनके पीछे गूढ़ वैज्ञानिक आधार है। प्रकृति ने गाय के शरीर को ऐसा बनाया है कि उसके शरीर से उत्पन्न हर पदार्थ अपने में विशिष्ट गुण रखता है, जो मनुष्य के लिए हितकर है। प्रकृति गाय के शरीर में ये विशिष्टताएँ दो कारणों से पैदा करती है। एक तो यह कि गाय के शरीर की जो चर्म है, वह सूर्यकिरणों से विशेष शक्ति और ऊर्जा ग्रहण करने की क्षमता रखती है, जिसके कारण गाय से पैदा होनेवाले सभी पदार्थ विशेष गुणकारी होते हैं। दूसरी विशिष्टता यह है कि गाय की शारीरिक आंतरिक बनावट इस प्रकार है कि उसके शरीर से पैदा हुए पदार्थ विशेष होते हैं।

प्राचीन काल में जब हमारे देश के गाँवों में किसी कारण महामारी, प्लेग आदि फैलता था, तब हमारे पूर्वज गाय के गोबर से घरों की दीवारों पर

चार अंगुल चौड़ी रेखा घर के चारों तरफ लिपवा देते थे, जिससे रोग के कीटाणु घर में प्रवेश नहीं कर पाते थे। गोमूत्र अनेक रोगों का नाश करता है। इसमें कैंसर जैसे रोगों को भी नियंत्रित करने की क्षमता है। ऐसा इसलिए संभव है, क्योंकि गोमूत्र में 'गंगा' निवास करती है। इस मान्यता का अर्थ है कि गंगाजल की तरह गोमूत्र भी पवित्र और कीटाणुनाशक है।

गाय के दूध को आयुर्वेद में अमृत कहा गया है। आज वैज्ञानिकों ने भी यह सिद्ध कर दिया है कि गौमाता के चर्म में वह आकर्षण शक्ति है, जो सूर्य की किरणों से एक प्रकार का स्वर्णिम तत्त्व आकृष्ट करके अपने दूध में समाविष्ट कर लेती है। इसी कारण गाय के दूध और घी में कुछ पीलापान झलकता है। सूर्य से प्राप्त यही पीलापन मनुष्य के लिए बहुत लाभदायक है, जो हमारी आंतरिक शक्ति को बढ़ाता है।

वैज्ञानिक भाषा में गाय के घी-दूध का यह पीलापन लैक्टोज (Lactose) कहलाता है। इस कारण गाय का दूध माँ के दूध से मिलता-जुलता है, क्योंकि माँ के दूध में सबसे अधिक लैक्टोज होता है। इसके बाद लैक्टोज गाय के दूध में पाया जाता है। गाय के दूध का यह गुण बच्चों का लगभग माँ के दूध जैसा ही पोषण करता है।

यदि हम अन्य दुधारू पशुओं, जैसे भैंस, बकरी, ऊँट, याक आदि को जंगल में बेरोक-टोक चरने के लिए गाय के साथ छोड़ दें तो देखेंगे कि गाय जो वनस्पति खाती है, वह दूसरे पशुओं की अपेक्षा अलग होती है, जो उसके दूध को मनुष्य के लिए अधिक गुणकारी व पौष्टिक बना देती है। भैंसें घास तथा बकरी व ऊँट काँटेदार वनस्पति अधिक पसंद करते हैं जबकि गाय घास के साथ कुछ विशेष पौधे भी चरती है, जो उसके दूध को विशिष्ट बनाते हैं।

एक और तथ्य ध्यान देने योग्य यह है कि गाय के दूध में गाय के अपने चर्म का रंग भी महत्त्वपूर्ण है। वैज्ञानिक अनुसंधानों द्वारा अब यह प्रमाणित हो चुका है कि लाल रंग और काले रंग की गायों का दूध सफेद रंग की गाय से गुणधर्म में अलग है। इस कारण उनके दूध की प्रभाव शक्ति भी भिन्न होती है। इस गुण-धर्म की भिन्नता का वैज्ञानिक कारण यह है कि लाल और काली गायें अपने चर्म के रंगों के कारण सूर्य की शक्ति को भिन्न-भिन्न मात्रा व ढंग

से अपने शरीर में ग्रहण करती हैं, जिसके कारण उनका दूध गुणवत्ता में अलग होता है। कर्मकांड में अलग-अलग प्रकार के गुणधर्मवाले दूध की आवश्यकता होती है। इसीलिए ब्राह्मण पूजा में आपसे काली या लाल गाय का दूध लाने को कहते हैं।

आपको यह जानकर भी आश्चर्य होगा कि गाय के विषय में जो तथ्य बताए गए हैं, वे सब भारत की देशी गाय के विषय में हैं। विदेशी 'जर्सी' गाय के दूध में ये सब गुण पूर्णरूप से विद्यमान नहीं होते। इसका वैज्ञानिक आधार यह है कि 'जर्सी' गाय की 'जेनेटिक म्यूटेशन' (Genetic mutation) देशी गाय से भिन्न होती है। प्राचीन काल में देशी गाय की भी कई प्रजातियाँ थीं, पर उन सबका दूध-दही गुण-धर्म में एक समान था।

अमेरिका ने कानपुर की एक फर्म को 'गौमूत्र' का पेटेंट दिया है और यह स्वीकार किया गया है कि गौमूत्र में कई बीमारियों की रोकथाम और ठीक करने की क्षमता है।

रूस के वैज्ञानिकों, विशेषकर डॉ. शीरोविक के अनुसार गाय के गोबर से लीपे गए घरों पर परमाणु रेडिएशन का प्रभाव नहीं पड़ता। यही नहीं, गाय के घी की अग्नि में आहुति देने से जो धुआँ उठता है, वह परमाणु रेडिएशन को काफी हद तक कम करता है।

खेद है, आज भारत में उसी पूजनीय गाय की दुर्दशा है, वह सड़क पर गंदी चीजें व प्लास्टिक की थैलियाँ खाती है। ऐसी स्थिति में गाय के द्वारा दिया दूध-दही हमें पहले जैसा पौष्टिक व नीरोग कैसे बना सकता है? यदि ऐसे दूध के कारण आज का वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखनेवाला आधुनिक मानव गाय के विषय में किए गए गुणगाान को ढकोसला या अंधविश्वास कहे तो आश्चर्य कैसा?

सबसे पहले गणेश की ही पूजा क्यों?

जिस प्रकार विष्णु विष्णुलोक और शिव शिवलोक के स्वामी हैं, उसी प्रकार 'गणेश' पृथ्वीलोक के स्वामी हैं। गणेश में पृथ्वी-तत्त्व की प्रधानता है। इसीलिए आपने प्राय: देखा होगा कि किसी भी पूजा-पाठ, जिसमें गणेशजी

की कोई प्रतिमा नहीं रखी होती, वहाँ पंडितजी मिट्टी का एक ढेला लेकर उस पर ही मौली बाँधकर 'गणेशजी' की स्थापना कर लेते हैं।

पृथ्वीलोक के स्वामी होने के नाते वे दसों दिशाओं के अधिपति भी हैं। पृथ्वी पर किसी अन्य लोक से आनेवाली कोई शक्ति इन्हीं दिशाओं से आती है। इस कारण, दूसरे देवलोकों से पृथ्वीलोक पर पहुँचने के लिए अन्य दैविक शक्तियों को गणेश-शक्ति की सहायता की आवश्यकता होती है। दूसरे देवताओं की कृपा व आशीर्वाद यहाँ पृथ्वीलोक पर हम तक ठीक-ठाक पहुँचे, इसलिए हम गणेशजी से प्रार्थना करते हैं कि वे अन्य देवताओं की कृपा व आशीर्वाद हम तक पहुँचने दें।

गणेश-पूजन सर्वप्रथम करने का एक और कारण यह है कि हम जो प्रार्थना करते हैं, वह शब्दों में होती है, जिसे वेद-पुराणों में नाद-भाषा कहते हैं, जबकि देवताओं की भाषा 'प्रकाश-भाषा' होती है। गणेशजी हमारी नाद-भाषा को देवताओं की प्रकाश-भाषा में रूपांतरित कर देते हैं और इस प्रकार से हमारी प्रार्थना गणेशजी की कृपा से दूसरे देवताओं तक पहुँच जाती है। इन्हीं कारणों से गणेश-पूजन सर्वप्रथम किया जाता है।

कौन से गणेश की मूर्ति घर के पूजागृह में रखनी चाहिए

गणेशु की मूर्ति या चित्र की ओर सामने से देखते समय जिस मूर्ति में उनका अग्रभाग हमारी दाईं ओर मुड़ा हुआ हो, ऐसी मूर्ति या चित्र को ही घर के पूजागृह में रखना चाहिए। इस प्रकार की मूर्ति को वाममुखी मूर्ति या चित्र कहते हैं। ऐसी मूर्ति घर में सुख-शांति लाती है। इसका कारण यह है कि गणेश की चंद्र-शक्ति इन मूर्तियों या चित्रों में अधिक सक्रिय-प्रवाहित होती है। वाममुखी उत्तर दिशा को दरशाती है, ऐसी प्रतिमाएँ अध्यात्म की दृष्टि से भी अपेक्षित हैं। यही कारण है कि घरों के पूजागृहों में वाममुखी गणपति प्रतिमा ही स्थापित की जाती है।

गणपति की जिन मूर्तियों व चित्रों में उनकी सूँड़ का अगला भाग सामने से हमारी बाईं ओर मुड़ा दिखे, उन्हें दक्षिणमूर्ति कहते हैं। ऐसी मूर्तियों में

गणेशजी की सूर्य नाड़ी सक्रिय व प्रवाहित होती है। सूर्य नाड़ी के कारण वातावरण उत्तेजित रहता है, जो घर की शांति के लिए हितकर व अपेक्षित नहीं होता। दक्षिणमूर्ति गणपति, दक्षिण दिशा, जो यमलोक को दरशाती हैं, के द्योताक हैं। दक्षिणमुखी मूर्ति की पूजा सामान्य विधि से नहीं की जाती, क्योंकि गृहस्थ लोग इस प्रकार की मूर्तियों की पूजा का विधि-विधान नहीं जानते। अत: घरों में दक्षिणमुखी गणपति नहीं रखने चाहिए।

दक्षिण दिशा यमलोक की दिशा है, जहाँ मनुष्य के पाप-पुण्य का हिसाब रखा जाता है। इसलिए यह दिशा अप्रिय है। इस कारण ऐसी मूर्ति बिना कर्मकांड के पूजनी नहीं चाहिए। परंतु मंदिरों के लिए ऐसी मूर्तियाँ उपयुक्त हैं, क्योंकि वहाँ पूजा-पाठ विधि-विधान व समयानुसार होता है।

मूर्ति के खंडित या भंग होने पर उस पर अक्षत (साबुत चावल) डालकर जल में विसर्जित कर देना चाहिए या फिर आदर से पीपल के वृक्ष के नीचे रख देना चाहिए।

नवरात्रों का वैज्ञानिक व आध्यात्मिक रहस्य

'नवरात्र' शब्द से विशेष महत्त्व रखनेवाली नौ रात्रियों का बोध होता है। इस काल में 'आदि शक्ति' के नौ रूपों की पूजा दिन से रात्रि-पर्यंत की जाती है। 'यात्र' शब्द सिद्धि का प्रतीक है। भारतीय ऋषि-मुनियों ने रात्रि को आध्यात्मिक दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण माना है। यदि रात्रि का कोई वैज्ञानिक रहस्य न होता, तो ऐसे विशेष उत्सवों को रात्रि न कहकर दिवस कहा जाता। किंतु दीपावली को दिन नहीं महारात्रि कहकर संबोधित किया जाता है। इसी प्रकार अन्य महारात्रियों में होलिका-महारात्रि और शिव-महारात्रि भी महत्त्वपूर्ण हैं। इसका वैज्ञानिक कारण है, दैविक शक्तियों का रात्रि में अधिक सक्रिय होना, क्योंकि दिन में सूर्य की किरणें दैविक तरंणों को छिन-भिन्न कर देती हैं।

यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि दोनों नवरात्र ऋतुओं के संधिकाल में आते हैं जब एक ऋतु से दूसरी ऋतु में परिवर्तन होता है। इसका वैज्ञानिक कारण यह है कि संधिकाल में आकाशमंडल में ग्रहों की स्थिति व वातावरण

दोनों मनुष्य के आध्यात्मिक विकास के लिए उपयुक्त होते हैं। ऋतु-परिवर्तन के कारण मनुष्य के शरीर की रासायनिक रचना में परिवर्तन होता है। यही कारण है कि इन नौ दिनों में व्रत करना हितकर है, क्योंकि व्रत करने से हमारे शरीर की ऊर्जा बढ़ती है, जो हमारे स्थूल व सूक्ष्म दोनों शरीरों पर प्रभाव डालती है। यही नवरात्रों का आध्यात्मिक रहस्य है।

१०८ दानोंवाली जपमाला का अंक-विज्ञान

मंत्र-साधना के लिए या नाम जप के लिए माला का प्रयोग लगभग सभी धर्मों में है। अंतर केवल इतना है कि माला के दाने अलग-अलग गणित से पिरोए जाते हैं। हिंदू धर्म में १०८ दानेवाली माला का प्रयोग प्राय: होता है। मुसलमान माला को 'तस्बी' कहते हैं और उसमें १०० दाने होते हैं, हर ३३ दानों के बाद एक 'जामीन' नामक दाना होता है। तस्बी में सबसे ऊपर के दाने को 'ईमाम' कहते हैं। ईसाई धर्म में माला 'रोजरी' कहलाती है और इसमें ६० दाने होते हैं। रोजरी में सबसे ऊपर 'क्रुसीफिक्स' होता है। सिखों की माला में २७ दाने होते हैं। सिख १०८ दानों की माला का भी प्रयोग करते हैं। वैसे मालाएँ दो प्रकार की होती हैं—एक जपमाला और दूसरी धारण करने की माला। जपमाला १०८ दानों की होती है, जबकि धारण करनेवाली माला ३२, २७, ५ या ३ दानों की होती हैं। जिस माला से जप करते हैं, उसे धारण या पहनना नहीं चाहिए।

हिंदुओं में १०८ दानों के पीछे अंक विज्ञान है। सबसे ऊपर के दाने को 'सुमेरु' कहते हैं। सनातन ऋषि-मुनियों ने १०८ दानों का गणित प्रकृति के कई सिद्धांतों को ध्यान में रखकर निश्चित किया था। इस अंक का विज्ञान पूरे ब्रह्मांड को अपने में समाए हुए है। यह अंक संख्या नौ ग्रहों और बारह राशियों का गुणनफल है (९ × १२=१०८), जो पूरे ब्रह्मांड को अपने में समाहित किए हुए है। नक्षत्र संख्या में सत्ताईस हैं और हर नक्षत्र के चार-चार चरण हैं, जिनका गुणनफल भी १०८ है (२७ × ४=१०८)।

वैज्ञानिक दृष्टि से तीन आयामों की इस दुनिया से परे जो चौथा आयाम

है, उसी को अपने में समाए जो अंक बनता है, उसी से सत्ताईस नक्षत्रों की गणना को गुणा करने से भी १०८ का अंक बनता है। इस प्रकार मंत्र ध्वनि उस चौथे आयाम तक पहुँचती है, जो इन आयामों की दुनिया से परे है। एक और कारण से भी १०८ का अंक महत्त्वपूर्ण है। एक दिवस में चौबीस घंटे होते हैं, पल, घड़ी और हर घड़ी में साठ पल व हर घंटे में साठ, हर पल में साठ प्रतिपल, इस प्रकार एक दिन में (६० × ६० × ६०=२१६०००) विपल होते हैं, जब हम इसे दो से भाग देते हैं तो १०८००० संख्या आती है, जिसके मूल में १०८ की संख्या है।

हिंदू धर्म में मालाएँ भी कई प्रकार की हैं, जिनका उपयोग अलग-अलग कार्यसिद्धि और देवताओं के लिए होता है। आमतौर पर तुलसी, चंदन व रुद्राक्ष की माल होती है। पर विशेष मंत्र साधना के लिए मुक्ता माला (मोती), प्रवाल माला (मूँगे), हलदी की माला, कमलगट्टे की मालाएँ भी होती हैं। इन सबके पीछे जो विज्ञान है, वह मंत्र विशेष या देवी-देवता की 'तंरगों' को ध्यान में रखकर किया गया है। उदाहरण के लिए, मोती की माला का प्रयोग चंद्रमा ग्रह और लक्ष्मी देवी से संबंधित है। इसी प्रकार हलदी की माला माँ दुर्गा से संबंध रखती है। परंतु रुद्राक्ष की माला सर्वश्रेष्ठ है और किसी मंत्र या देवता की पूजा-आराधना में प्रयोग की जा सकती है। अभिप्राय यह है कि माला का चयन वैज्ञानिक कारण से है, किसी काल्पनिक या अंधविश्‍वास के कारण नहीं।

जपमाला के विषय में एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जपमाला हर व्यक्ति की अपनी अलग होनी चाहिए। किसी दूसरे व्यक्ति की जपमाला का प्रयोग नहीं करना चाहिए और न ही अपनी माला जपने के लिए किसी को देनी चाहिए। आपकी माला आपके आध्यात्मिक 'लॉकर' की तरह होती है, जिस पर आपने मंत्रों की जमापूँजी सूक्ष्म रूप से सँजोई होती है। इसलिए जप करते समय आप को अपनी माला गोमुखी में रखकर जाप करना चाहिए, ताकि कोई आप को जप करते समय देखे नहीं।

माला द्वारा मंत्र जाप किए जाने के पीछे वैज्ञानिक पक्ष यह है कि अंगुष्ठ (अँगूठा) और मध्यमा अंगुली द्वारा जब माला का दाना फेरा जाता है तब इन तीनों के संघर्ष से एक विलक्षण मानव-विद्युत् उत्पन्न होती है, जो सीधी

हमारे हृदय-चक्र को प्रभावित करती है। इससे मन को एकाग्र करने में सहायता मिलती है।

सनातन चिंतन के अनुसार हमारे शरीर में अंगुष्ठ का संबंध आत्मा से और मध्यमा अंगुली का हृदय प्रदेश से सीधा संबंध है, इसीलिए मंत्रजाप माला द्वारा ही करना चाहिए।

हिंदू अपने शव क्यों जलाते हैं?

मृत्यु जीवन का एक कटु सत्य है। जो जनमा है, उसकी मृत्यु भी होगी। हर धर्म में शवों की अंत्येष्टि करने की अपनी-अपनी प्रथाएँ हैं। हिंदू धर्म में शवों का अग्निदाह किया जाता है। प्राचीन मनीषियों ने बहुत सोच-समझकर इस प्रथा को जन्म दिया। उनका यह मानना था कि मनुष्य का शरीर, जो पाँच तत्त्वों से बना है, अग्निदाह करने से शीघ्रतम पाँचों तत्त्वों में विलीन हो जाता है। मनुष्य के पंचतत्त्वों का प्रकृति के तत्त्वों में विलय होना प्रकृति के संतुलन को बनाए रखने में सहायक होता है।

दूसरा एक कारण यह भी है कि अग्निदाह से मृतक शरीर के घातक जीवाणु जलकर नष्ट हो जाते हैं और इस प्रकार वातावरण शुद्ध रहता है। एक और कारण यह भी है कि अग्निदाह के लिए शव को अलग से जमीन की जरूरत भी नहीं होती। विदेशों में बसे हिंदुओं को देखकर कुछ पाश्चात्य लोगों ने भी अग्निदाह को स्वीकार किया है। एक अनुमान के अनुसार अमेरिका में २०१० तक अग्निदाह ४० प्रतिशत तक हो जाएगा। भारत में ईसाई धर्म के अनुयायियों में भी अब यह प्रथा देखी जा रही है।

हिंदुओं में चौदह मास के बालक की मृत्यु पर उसे जलप्रवाह करते हैं। भारत में भी सिंधु सभ्यता के दौरान शवों को भूमिगत ही करते थे। पर बाद में अग्निदाह किया जाने लगा। महानगरों में विद्युतदाह भी होता है। विद्युतदाह अग्निदाह का आधुनिक रूप है।

विद्युतदाह में हिंदुओं में प्रचलित 'कपालक्रिया' नहीं हो सकती। कपालक्रिया के लिए जो व्यक्ति शव को अग्नि देता है, वह शव के आंशिक जल जाने पर बाँस द्वारा शव की खोपड़ी को तोड़ता है। इसके पीछे यह

विज्ञान है कि मनुष्य के मस्तिष्क में रहनेवाला जीवाणु पूर्णतया समाप्त हो जाए और उसमें से उपप्राण निकलकर पंचतत्त्व में शीघ्र विलीन हो जाए।

आधुनिक विज्ञान भी यह मानता है कि मरने के बाद भी मनुष्य का मस्तिष्क कुछ समय तक जीवित रहता है। यह सत्य हिंदू मनीषियों ने हजारों वर्ष पूर्व जान लिया था, इसीलिए 'कपालक्रिया' की प्रथा को उन्होंने जन्म दिया। खेद है, धर्म की यह बारीकी श्मशान घाट पर क्रिया-कर्म करनेवाले आचार्य भी नहीं जानते, जिसके परिणामस्वरूप हम इन सब बातों को व्यर्थ की बात मानते हैं, क्योंकि हम इन सब बातों के पीछे के विज्ञान से अनभिज्ञ हैं।

जीवन की अंतिम यात्रा से जुड़ी कुछ और सनातन बातें भी ध्यान देने योग्य हैं। पहले समय में जब यह लगने लगता था कि अब मरनेवाला अधिक समय और जीवित नहीं रहेगा तो यह प्रथा थी कि उस व्यक्ति को चारपाई से उतारकर जमीन पर लिटा देते थे, जिसके पीछे यह विज्ञान था कि जमीन पर उतार लेने से बीमार के प्राण आसानी से निकल जाते हैं, क्योंकि जमीन प्राणशक्ति को अपने में शीघ्र प्रवाहित कर लेती है। चारपाई के पाए क्योंकि उन दिनों लकड़ी के होते थे, इसलिए प्राण निकलने में कठिनाई होती थी, क्योंकि लकड़ी से विद्युत् (प्राण भी एक प्रकार की विद्युत् होते हैं) प्रवाहित नहीं होती; जबकि जमीन से एकदम हो जाती है। इसी कारण बीमार को जमीन पर उतार लेते थे।

शवयात्रा के दौरान हिंदू शव को शांत या मौन रहकर श्मशान नहीं ले जाते हैं, अपितु उस अवसर पर समाज के लोगों को संदेश देते हैं कि सिवाय 'रामनाम' के इस मिथ्या संसार में कुछ और 'सत्य' नहीं है। इसीलिए शवयात्रा में 'श्रीराम नाम सत्य है' कहा जाता है। सनातन धर्म इस प्रकार मृत्यु में भी जीवन को संदेश देता है।

विवाह पूर्व जन्मकुंडली मिलाने के पीछे का विज्ञान

विवाह किसी भी स्त्री-पुरुष के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण कदम है, अत: इसे उठाते समय हमें खूब सोच-विचारकर उठाना चाहिए। विवाह से हमारे जीवन की कई महत्त्वपूर्ण बातें जुड़ी हैं; जैसे स्त्री-पुरुष का प्यार, यौन-

संबंध, बच्चे, जीवन के अन्य सुख, समाज में स्थान और जीवन में प्रगति व उन्नति। विवाह के बाद ही मनुष्य पूर्ण होता है, क्योंकि पुरुष को स्त्री और स्त्री को पुरुष मिलता है। इस प्रकार से वे दोनों एक-दूसरे के पूरक बनते हैं।

जन्मकुंडली मिलाने से यह पता चलता है कि दोनों के मिलने से क्या उन दोनों के संबंध विवाह के बाद ठीक रहेंगे या नहीं। हमारे शास्त्रों में मनुष्य के स्वभाव को तीन प्रकार का बताया गया है; जैसे देवता-स्वभाव, राक्षस-स्वभाव और मनुष्य-स्वभाव। जन्मकुंडली में इसे 'गण' कहते हैं। देवता-स्वभाववाले व्यक्ति का विवाह यदि राक्षस-स्वभाववाली स्त्री के साथ होगा तो संभावना यही है कि वे दोनों सारी जिंदगी लड़ाई-झगड़े, मन-मुटाव और कलह में ही बिताएँगे। स्त्री-पुरुष एक जैसे स्वभाव के होंगे तो जीवन ठीक-ठाक चलेगा। यदि दोनों में से एक देवता-स्वभाव तथा दूसरा मनुष्य स्वभाववाला है तो ठीक-ठाक ही होगा, पर यदि मनुष्य स्वभाववाली स्त्री का विवाह किसी राक्षस-स्वभाववाले व्यक्ति से हुआ तो वह पुरुष सारी उम्र उस स्त्री पर रोब ही जमाता रहेगा और उसे व्यक्तिगत रूप से प्रगति नहीं करने देगा। आजकल अधिक विवाह-विच्छेद होने का यह एक बड़ा कारण है।

इसी तरह जन्मकुंडली मिलाने से स्त्री-पुरुष के यौन संबंध का भी पता चलता है; वे दोनों एक-दूसरे को पूर्ण यौन-सुख दे पाएँगे या नहीं ? उन दोनों के मिलन से बच्चे समय पर होंगे या नहीं ? बच्चों में कोई शारीरिक कमजोरी तो नहीं होगी ? ये सब बातें एक अच्छा व सच्चा ज्योतिषाचार्य ही बता सकता है, पैसे लेकर जन्मकुंडली मिलानेवाले ज्योतिषी नहीं।

प्राय: देखा गया है कि प्रेम-विवाह में विवाह से पूर्व स्त्री-पुरुष के संबंध ठीक-ठाक ही होते हैं, पर विवाह के बाद कई बार संबंध कटु होते देखे गए हैं, क्योंकि प्रकृति के नियमों के अनुसार वे दोनों अच्छे मित्र तो रह सकते हैं, पर पति-पत्नी के रूप में उनका संबंध ग्रहों के अनुसार अनुकूल नहीं होता, इसलिए विवाह के बाद समस्याएँ पैदा हो जाती हैं।

एक और महत्त्वपूर्ण जानकारी, जो जन्मकुंडली के मिलाने से मालूम पड़ती है, वह है विवाह-सूत्र की आयु। फलित ग्रंथों द्वारा पत्नी-नाशक या पति-नाशक योग का पता लगाया जा सकता है। इसलिए जन्मपत्री मिलाते

समय वैधव्य योग देखना बहुत आवश्यक है। ऐसे विवाह का क्या लाभ जो कुछ ही समय में जीवनसाथी का जीवन ही छीन ले।

एक सफल वैवाहिक जीवन के लिए पति-पत्नी के मानसिक स्तर में अंतर केवल ५ प्रतिशत ही होना चाहिए, इससे अधिक नहीं। ये सभी बातें जन्मपत्री मिलाते समय देखी जाती हैं।

इस तरह कई कारणों से विवाह के समय जन्मपत्री मिलाना एक समझदारी की बात है। पर शर्त यह है कि दोनों की जन्मपत्रियाँ ठीक-ठाक बनी हों और उनके बनानेवाले पंडित भी ज्ञानी रहे हों, वरना उस पर लिखी बातों का कोई अर्थ नहीं रह जाता। पर आजकल इन सब बातों पर लोग ध्यान नहीं देते। परिणाम हमारे सामने टूटते घरों की बढ़ती संख्या के रूप में है।

तुलसी के पौधे व पत्तों का वैज्ञानिक महत्त्व

तुलसी एक दैविक वनस्पति है, इसलिए तुलसी का सनातन समाज में बहुत महत्त्व था। आज भी पूजा-पाठ में तुलसी के पत्तों की जरूरत पड़ती है। पंचामृत व चरणामृत, दोनों में तुलसी के पत्ते अनिवार्य हैं। एक समय था जब भारत के हर घर-आँगन में तुलसी का चौरा (तुलसी लगाने का स्थान) होता था, क्योंकि पवित्रता में तुलसी का स्थान गंगा से भी ऊँचा है।

धर्म की दृष्टि से तुलसी में अधिक मात्रा में विष्णु तत्त्व होते हैं, जो पवित्रता के प्रतीक हैं। इसलिए जिन पदार्थों में तुलसी डालते हैं, वे पवित्र हो जाते हैं और क्योंकि इसके पत्तों में ईश्वरीय तरंगों को आकर्षित करने की क्षमता होती है और वे दैवी शक्ति प्रदान करते हैं। तुलसी की माला विष्णु परिवार से जुड़े देवी-देवताओं के मंत्र जाप के लिए प्रयोग में लाई जाती है। तुलसी की माला धारण करने से एक रक्षा कवच बन जाता है। तुलसी के पत्तों-शाखाओं से एक ऐसा रोगनाशक तेल वायुमंडल में उड़ता है कि इसके आसपास रहने, इसे छूने, इसे पानी देने और इसका पौधा रोपने से ही कई रोग नष्ट हो जाते हैं। इसकी गंध दसों दिशाओं को पवित्र करके कवच की तरह

प्राणियों को बचाती है। इसके बीजों से उड़ते रहनेवाला तेल तत्त्व त्वचा से छूकर रोम-रोम के विकार हर लेता है।

आयुर्वेद के अनुसार तुलसी एक रामबाण पौधा है, जिसका प्रयोग कई प्रकार के शारीरिक कष्टों को दूर करने में होता है। तुलसी दो प्रकार की होती है—एक साधारण हरे पत्तोंवाली तथा दूसरी श्यामा-तुलसी, जिसके पत्ते छोटे व काले रंग के होते हैं। श्यामा तुलसी पूजा के लिए अधिक उपयुक्त मानी जाती है। इसका औषधि के रूप में एक और लाभ यह है कि तुलसी के पत्तों में कुछ मात्रा में पारा (मरकरि) होता है। मरकरि एक सीमित मात्रा में शरीर के लिए बहुत हितकारी है, पर दाँतों के लिए हानिकारक। इस कारण तुलसी के पत्तों को साबुत ही निगला जाता है, दाँतों से चबाया नहीं जाता। 'तुलसी' नीम और शहद से भी अधिक गुणकारी है।

एक और विशिष्टता तुलसी की यह है कि जहाँ और फूल-पत्तियों की शक्ति मुरझाने पर समाप्त हो जाती है, वहीं तुलसी के पत्तों की शक्ति सूखने पर भी बनी रहती है और ये वातावरण को सात्त्विक बनाए रखते हैं। अगर घर-आँगन में, सड़क-किनारे या कहीं और तुलसी की बगीची लगा दें तो साँप-बिच्छू अपने आप वहाँ से भाग जाते हैं। इसी कारण, तुलसीवाले घर-आँगन को तीर्थ समान माना जाता है।

बिल्वपत्र (बेल के पत्ते) भी तुलसी की ही भाँति सदा शुद्ध रहते हैं। जहाँ तुलसी में विष्णु तत्त्व होता है, वहीं बिल्व पत्र में शिव तत्त्व होता है। इनमें भी सूखने के बाद देवता तत्त्व सदैव विद्यमान रहता है और उसे प्रक्षेपित करता रहता है। बिल्वपत्र के चिकने भाग को नीचे की तरफ रखकर शिव पिंडी पर चढ़ाते हैं।

तुलसी का एक नाम वृंदा भी है अर्थात् विद्युत्-शक्ति। इसलिए तुलसी की लकड़ी से बनी माला, करधनी, गजरा आदि पहनने की प्रथा सदियों से चली आ रही है, क्योंकि इनसे विद्युत् की तरंगें निकलकर रक्त-संचार में कोई रुकावट नहीं आने देतीं। इसी प्रकार गले में पड़ी तुलसी की माला फेफड़ों और हृदय को रोगों से बचाती है।

आप में से कुछ को यह जानकर आश्चर्य होगा कि मलेशिया द्वीप में कब्रों पर तुलसी द्वारा पूजन-प्रथा चली आ रही है, जिसका वैज्ञानिक आधार

यह है कि मृत शरीर वायुमंडल में दुष्प्रभाव और दुर्गंध नहीं फैलाता। शव को तुलसी-विटप के पास रखने का एक मात्र वैज्ञानिक रहस्य यही है कि शव देर तक सुरक्षित रहता है और मृत शरीर की गंध तुलसी की दुर्गंध से दबी रहती है।

इजराइल में भी तुलसी के बारे में ऐसी ही धारणाएँ हैं। सूर्य-चंद्र के ग्रहण के दौरान बड़े-बुजुर्ग अन्न-सब्जियों में तुलसीदल (पत्ते) इसलिए रखते थे कि सौर मंडल से उस समय आनेवाली विनाशक विकिरण तरंगें खाद्यान्न को दूषित न करें। इस प्रकार ग्रहण के समय तुलसीदल एक रक्षक आवरण का कार्य करता है।

तुलसी के पत्ते रात होने पर नहीं तोड़ने का विधान है। विज्ञान यह है कि इस पौधे में सूर्यास्त के बाद इसमें विद्यमान विद्युत्-तरंगें प्रकट हो जाती हैं, जो पत्तियाँ तोड़नेवाले के लिए हानिकारक हैं। इससे उसके शरीर में विकार आ सकता है।

तुलसी सेवन के बाद दूध नहीं पीना चाहिए। ऐसा करने से चर्म रोग हो जाने का डर है। इसी प्रकार, तुलसी सेवन के बाद पान भी नहीं चबाना चाहिए, क्योंकि तुलसी और पान दोनों ही पदार्थ तासीर में गरम हैं, जो सेवन करनेवाले के लिए हानिकारक हो सकते हैं।

दान क्यों देना चाहिए?

विश्व के सभी धर्मों में दान देने पर जोर दिया गया है। वैदिक धर्म में 'दान' पर बहुत कुछ लिखा व कहा गया है। दान देना एक ऐसा धार्मिक कृत्य है, जिसमें मनुष्य और समाज दोनों का हित निहित है। व्यक्तिगत स्तर पर दान देने से मनुष्य आध्यात्मिक दृष्टि से ऊपर उठता है, जबकि सामाजिक दृष्टि से वह सामाजिक विषमता को दूर करने में समाज की सहायता करता है।

दान देने के पीछे प्रकृति का जो विज्ञान काम करता है, वह बड़ा सरल है। जब कोई व्यक्ति दान देता है तो वह ईश्वर का कार्य करता है, क्योंकि ईश्वर का काम देना है। प्रकृति का सहज स्वभाव भी देना है। सूर्य हमें बिना माँगे प्रतिदिन प्रकाश व ताप देता है। नदी, तालाब, कूप आदि हमें बिना मूल्य के

जल देते हैं और वायु हमें नि:शुल्क प्राणदायिनी हवा देती है, वृक्ष बिना कुछ माँगे हमारे वातावरण को स्वच्छ बनाते हैं और फल देते हैं। धर्मग्रंथों में लिखा है कि हमें प्रकृति के प्रति कृतज्ञ होकर उसकी सेवा करनी चाहिए। वृक्षारोपण, पेड़-पौधों को जल देना, नदी, तालाब, कूप आदि को साफ रखना प्रकृति सेवा है और उसे दान देने के समान है। दान देने में प्रकृति का एक और नियम कार्यरत होता है—'जितना दोगे, उससे अधिक पाओगे।' मनुष्य द्वारा किया गया कोई भी कार्य नष्ट नहीं होता, चाहे वह अच्छा हो या बुरा। उस कार्य की तरंगें ऊपर आकाश तत्त्व में विलीन होकर कालचक्र के साथ परिवर्तित होकर फिर पृथ्वी पर लौटती हैं और उस कार्य को करनेवाले को प्रभावित कर दंडित या सम्मानित करती हैं। 'ऋग्वेद' में लगभग चालीस 'गानमंत्र' हैं, जिन्हें सामूहिक रूप से 'दानश्रुति' कहते हैं, जिनमें दान की महिमा का वर्णन है। उपनिषदों में अनेक दानवीर राजाओं के नामों की सूची है। 'छांदोग्योपनिषद्' में धर्म की तीन शाखाएँ बताई गई हैं, जिनमें से दान एक है। इन धर्म ग्रंथों के अनुसार जो व्यक्ति दान देता है, उसे कभी भौतिक पदार्थों की कमी नहीं होती, क्योंकि प्रकृति अपने सूक्ष्म नियम के अनुसार उसके द्वारा दिए गए दान को किसी-न-किसी रूप में वापस कर देती है।

'गीता' में भी इसी सत्य का प्रतिपादन किया गया है और साथ ही दान के तीन स्वरूपों का वर्णन भी किया है। गीता के अनुसार दान तीन प्रकार के होते हैं—सात्त्विक, राजस व तामसिक। सात्त्विक दान वह होता है जो सहज भाव से बिना किसी फल की अपेक्षा किए दिया जाता है। इसका एक आधुनिक रूप 'गुप्तदान' कहलाता है। राजस-दान वह जो किसी फल (नाम, यश, धन, पुत्र-प्राप्ति आदि की कामना) की इच्छा से दिया जाता है। तामस-दान वह दान है जो किसी कुपात्र को तिरष्कृत करते हुए दिया जाता है। गीता के अनुसार सात्त्विक-दान श्रेष्ठ है, पर आधुनिक युग में राजस-दान का ही बोलबाला है।

कूर्मपुराण में दान की चार श्रेणियाँ हैं—नित्य दान, नैमित्य दान, काम्य दान और विमल दान। नित्य दान वह अल्पदान है जो हम प्रतिदिन जाने-अनजाने में करते हैं, जैसे पक्षियों को दाना देना, पेड़-पौधों को जल देना या

फिर घर के नौकर को चाय-पानी देना आदि। नैमित्य दान वह दान है जो हम अपने पूर्वजन्म के पापों से मुक्ति पाने के लिए करते है, जैसे—बीमार होने पर किसी मंदिर में 'तुला-दान' करना (बीमार के शरीर के वजन के बराबर सात प्रकार का अन्न तौलकर दान करना) या फिर शनिग्रह दोष-निवारण के लिए शनिवार के दिन स्टील या लोहे की कटोरी में उड़द की काली दाल, एक सिक्का और सरसों या तिल अपनी छाया उसमें देखकर शनिदेव की प्रतिमा पर चढ़ाना आदि। काम्य दान वह दान है जो किसी कामना की पूर्ति के लिए किया जाता है, जैसे—धन-प्राप्ति के लिए, पुत्र-प्राप्ति के लिए, पुत्री के विवाह के लिए या फिर मृत्यु के बाद स्वर्ग-प्राप्ति के लिए; परंतु विमल-दान सर्वश्रेष्ठ है। यह वह दान है जो निर्मल मन से बिना किसी इच्छा या कामना से परोपकार के लिए किया जाता है।

विमल-दान और गीता में बताया सात्त्विक-दान दोनों श्रेष्ठ हैं। इन दोनों में मनुष्य अपना धन, सुख, सामर्थ्य व संपदा परोपकार की दृष्टि से ईश्वर की तरह दूसरों में बाँटता है। चूँकि मनुष्य का यह कर्म इच्छा-रहित है, इसलिए यह प्रकृति के सूक्ष्म स्तर पर कार्यरत होता है, जिसका फल कालांतर में प्रकृति कई गुना उस व्यक्ति को लौटाती है। इस कारण यह दान देना अधिक हितकर है।

'महाभारत' के अनुशासनपर्व के कई अध्यायों में दान पर चर्चा है। इसी पर्व में सूतपुत्र कर्ण को निम्न जाति का होने के बावजूद 'दानवीर' की संज्ञा से संबोधित किया गया है। इसी पर्व में कहा गया है कि मनुष्य को वृक्षों का पालन अपनी संतान की तरह करना चाहिए। महाभारत के शांतिपर्व में कहा गया है कि मनुष्य को अपनी पहली आय का दसवाँ भाग दान देने से उसकी आय सदा बनी रहती है।

चंद्रग्रहण और सूर्यग्रहण के अवसर पर दान देने का बड़ा महत्त्व है। उस समय दिया दान अधिक फलदायी होता है, क्योंकि आकाशमंडल में पृथ्वी का संबंध सूर्य-चंद्रमा से विशिष्ट होने के कारण मनुष्य द्वारा किए कर्मों का सूक्ष्म प्रभाव अधिक व अल्पकाल में कार्यरत हो जाता है। ऐसा प्रकृति के सूक्ष्म अदृश्य नियमों के कारण होता है।

कर्मकांड की पूजा के उपरांत जो दान पूजा करानेवाले पंडित को दिया जाता है, उसे दक्षिणा कहते हैं। इस दान के पीछे त्याग व कृतज्ञता का भाव होता है, जिसमें पूजा करवानेवाले की श्रद्धा व सामर्थ्य दोनों होती हैं। परंतु आजकल तो पंडितजी माँग कर दक्षिणा लेते हैं। ऐसा करने से दक्षिणा दान न होकर कर्मकांड की 'फीस' बनकर रह जाती है। इस प्रकार के पंडित दक्षिणा लेकर पूजा करानेवाले को आशीर्वाद भी नहीं देते और न ही पूजा करानेवाला दक्षिणा देकर पंडित के चरण ही छूता है। यह युग का प्रभाव है।

इसलाम धर्म में भी 'जकात' (दान) पर जोर दिया गया है। रमजान के महीने में मुसलमानों को उदारता से दान देने की हिदायत दी गई है।

पूजा-पाठ में चंदन का प्रयोग क्यों करते हैं

पूजा-पाठ में देवताओं को तिलक लगाने के लिए विविध प्रकार के द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है, उनमें से अष्टगंध व चंदन सबसे अधिक सात्त्विक हैं। देव के माथे पर तिलक लगाने के पीछे यह विज्ञान है कि देवता की सुषुम्ना नाड़ी सक्रिय होकर मनुष्य यानी पूजक की आध्यात्मिक व भौतिक उन्नति करें।

कर्मकांड के अनुसार, सकाम साधना में दोनों हाथों से चंदन घिसने की प्रक्रिया को महत्त्व दिया है। किसी भी कार्य की संपूर्ण सिद्धि के लिए उस शिव (बाएँ) व शक्ति (दाएँ) को जोड़ना आवश्यक है। जब हम दोनों हाथों से चंदन घिसते हैं तो शिव व शक्ति दोनों के तत्त्व अपने में जाग्रत् कर लेते हैं। दोनों हाथों से चंदन घिसने पर शरीर की सुषुम्ना नाड़ी सक्रिय हो जाती है, जो मनुष्य के लिए हितकर है।

इसके विपरीत, मृत व्यक्ति के लिए दाएँ हाथ से चंदन घिसने का विधान है। दाएँ हाथ से चंदन घिसकर दाहिनी नाड़ी (पिंगला नाड़ी) द्वारा मृत शरीर की लिंगदेह को क्रियाशक्ति प्रदान कर उसकी आगे की अनंत यात्रा के लिए गति देना है। हमारे प्राचीन शरीर-विज्ञान के अनुसार प्राण निकल जाने के बाद भी मृत शरीर में कुछ मात्रा में सुप्त उपप्राण कुछ समय तक शेष रहते हैं। आधुनिक वैज्ञानिक भी अब यह मानते हैं कि मरने के बाद कुछ समय

तक मनुष्य का मस्तिष्क जीवित रहता है। यही कारण है कि हिंदुओं में मृतक को चिता पर अग्निदाह के समय कपाल-क्रिया की जाती है, ताकि उसकी खोपड़ी में स्थित उपप्राण शीघ्र मुक्त होकर पंचतत्त्व में विलीन हो जाएँ। चंदन के इस गुण के कारण चिता पर चंदन की लकड़ी के टुकड़े चढ़ाए जाते हैं। दाएँ हाथ से चंदन घिसनेवाले व्यक्ति की सूर्यनाड़ी (दाईं) सक्रिय होती है और इस प्रकार उसके शरीर से रजोगुणी तरंगें निकलकर मृत व्यक्ति की देह को प्राप्त होती हैं, जो उसके उपप्राण को शीघ्र उसके मृत शरीर से निकलने में सहायक बनती हैं।

चंदन में सात्त्विकता होती है, जो मनुष्य की आध्यात्मिकता के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसीलिए दोनों भृकुटि के बीच माथे पर चंदन का तिलक लगाने की प्रथा है। परंतु यदि हम सफेद चंदन में हलदी या कुंकुम मिलाकर घिसें तो उसकी सात्त्विकता कम हो जाती है, क्योंकि हलदी व कुंकुम में रजोगुणी तरंगें होती हैं, जो चंदन के सत्त्वकणों का विघटन कर देती हैं। इसलिए चंदन घिसते समय उसमें हलदी या कुमकुम नहीं मिलाना चाहिए।

जब हम किसी देव प्रतिमा या चित्र पर देव की भ्रूमध्य में चंदन का तिलक लगाते हैं तो उस देवता की सूर्यनाड़ी जाग्रत् हो जाती है। इससे देवता का तत्त्व उस प्रतिमा अथवा चित्र की ओर आकृष्ट होता है और वे जाग्रत् हो जाते हैं तथा आस-पास के वातावरण को आध्यात्मिक बनाते हैं। चंदन के प्रयोग के पीछे यही विज्ञान है।

पूजा-पाठ में प्रयोग होनेवाले विशेष पदार्थों का विज्ञान

संसार में यों तो हजारों पदार्थ हैं, पर सनातन ऋषि-मुनियों ने कुछ गिने-चुने पदार्थ ही पूजा-पाठ के लिए उपयुक्त माने हैं। उनके चयन के पीछे वैज्ञानिक कारण व आधार था। जब कभी भी घर में पूजा-पाठ होता है तो पूजा के लिए पंडितजी आपसे हलदी की गाँठ, कुंकुम, चंदन (सफेद या रक्त), केसर, धूप, अगरबत्ती, पान-सुपरी, लौंग, कपूर, चावल, जौ, काले तिल, अष्टगंध, तुलसी, दूब, गंगाजल, नारियल, आम के नौ या ग्यारह पत्ते, गाय का घी आदि सामग्री मँगवाते हैं।

प्रश्न उठता है कि चावल की जगह गेहूँ, हलदी की गाँठ की बजाय जीरा, केसर के स्थान पर कुछ और, पान-सुपारी की जगह कत्था-चूना क्यों नहीं प्रयोग करते ?

इन सभी प्रश्नों का एक ही उत्तर है कि पूजा के हर पदार्थ की अपनी एक विशिष्टता होती है, जो वैज्ञानिक है। यहाँ सब पदार्थों पर विचार न करके कुछेक पर ही प्रकाश डालेंगे। सर्वप्रथम पान का विज्ञान समझने का प्रयत्न करते हैं। पान प्रकृति का एक अति संवेदनशील पदार्थ है। यह एक प्रमाणित सत्य है कि यदि कोई अशुद्ध व अस्वच्छ महिला पान की खेती में प्रवेश करे तो उस खेत के पान जल (काले पड़) जाएँगे। इसी प्रकार, तुलसी का पौधा भी संवेदनशील है। पान और तुलसी के पत्तों में ईश्वरीय तरंगों को अपनी ओर आकर्षित करने की क्षमता होती है। यही गुण सुपारी में भी है। तुलसी के पत्ते में सात्त्विकता बहुत होती है, जो दैविक शक्तियों को पसंद है। गंगाजल पूजा के स्थान को पवित्र करता है (Disinfect), इसीलिए गंगाजल छिड़का जाता है। अष्टगंध अपनी गंध से दैविक शक्तियों को पूजा स्थल पर आकर्षित करती है, क्योंकि सुगंध देवताओं को प्रिय है और वे उस ओर खिंचते हैं तथा हमारे द्वारा की जानेवाली पूजा में सूक्ष्म रूप से भाग लेते हैं।

कुंकुम को हलदी से तैयार किया जाता है। हलदी को चूने के पानी में भिगोने से वह लाल बन जाती है, और इस प्रकार हलदी से कुंकुम तैयार होता है। हलदी जमीन के नीचे पैदा होती है, इस कारण जमीन के ऊपर उगनेवाली वस्तुओं की अपेक्षा हलदी में भूमि लहरियाँ अधिक मात्रा में होती है। जब हम देवी-देवताओं को हलदी-कुमकुम चढ़ाते हैं तो उससे प्रक्षेपित भूमि-लहरियाँ देवताओं की लहरियों के साथ सर्वत्र फैलती हैं। इस कारण, हम पृथ्वी की विविध लहरों को बिना किसी रुकावट के ग्रहण कर लेते हैं। संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि पूजा-पाठ में प्रयोग आने-वाले सभी पदार्थों का कोई-न-कोई वैज्ञानिक आधार अवश्य है।

आरती उतारने के पीछे का विज्ञान

हम जब किसी देव या देवी की प्रतिमा, किसी सच्चे संत या पहुँचे हुए

गुरु की आरती उतारते हैं, तो उनमें विद्यमान पवित्र कण सक्रिय होकर प्रक्षेपित होने लगते हैं, जिनका लाभ आरती उतारनेवाले को मिलता है। यही इसका सूक्ष्म विज्ञान है।

भगवान् के दर्शन के लिए यों तो आप कभी भी मंदिर जा सकते हैं, पर आरती के समय देवताओं या दैविक शक्तियों का वहाँ आगमन अधिक रहता है, जिस कारण मंदिर में उस समय दैविक प्रभाव बहुत अधिक रहता है। अत: उस समय मंदिर की सात्त्विकता बढ़ जाती है, जिसके फलस्वरूप दर्शनार्थियों को लाभ मिलता है। इस कारण आरती के समय मंदिर, देवालय तथा अन्य पवित्र स्थलों पर उपस्थित रहने से अधिक पुण्य प्राप्त होता है।

इसके अतिरिक्त आरती उतारने के पीछे एक और कारण भी है, जिसका संबंध मनुष्यों से है। विवाह के दिन वर-वधू की, नामकरण के दिन नवजात शिशु की, जन्मदिन पर बच्चों की, करवाचौथ के दिन पति की, भैयादूज के दिन भाई की, विजयी वीर की या फिर किसी विशेष कारणों से किसी भी व्यक्ति की आरती उतारी जाती है। यह एक प्रतिपादित सत्य है कि हर व्यक्ति के चारों ओर एक आभामंडल होता है, जो नकारात्मक शक्तियों से उसकी रक्षा करता है। इस आभामंडल पर 'ईर्ष्या' (किसी की खुशी से जलन) का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। आरती उतारने के पीछे नकारात्मक भावना यानी ईर्ष्या के दुष्प्रभाव को दूर रखना है। भूत, काला जादू इत्यादि अनिष्ट शक्तियों के कष्ट से भी आरती उतारने से मनुष्य का रक्षण होता है।

आरती उतारने की सही पद्धति—आरती की थाली में हलदी-कुंकुम, पान-सुपारी, अष्टगंध, अक्षत, दूध से बनी मिठाई, मिसरी या शक्कर व दीया होना चाहिए। थाली भी कांस्य की होनी चाहिए। जिसकी आरती उतारनी है, उसे प्रथम कुंकुम, अष्ट गंध इत्यादि का तिलक लगाकर अक्षत तिलक पर लगाएँ और फिर कुछ अक्षत उसके सिर के चारों ओर बाईं से दाईं ओर (Clockwise) घुमाना चाहिए। यह क्रिया उस व्यक्ति के शरीर के चारों ओर किसी भी नकारात्मक शक्ति को अपने में समाविष्ट कर लेती है। फिर उसके सिर के चारों ओर घड़ी की दिशा में दीपक को तीन बार गोल-गोल घुमाएँ। यह उस व्यक्ति के आभामंडल को सशक्त बना देता है।

एक और ध्यान देनेवाली बात यह है कि देवी-देवताओं की आरती की थाली में घी का और मनुष्य की आरती की थाली में तेल का दीया होना चाहिए। आरती तीन बार करनी होती है और आरती का प्रारंभ उस व्यक्ति या देवता के दाएँ पाँव से होता है। यही बारीकियाँ हैं, जो आरती के विज्ञान से जुड़ी हैं, जिनका पूर्ण पालन आज का आधुनिक मानव नहीं करता और फिर जब परिणाम ठीक नहीं मिलता तो इन मान्यताओं को ढकोसला व अंधविश्वास बता देता है, जबकि दोष उसकी अपनी अज्ञानता का होता है।

किस देवी-देवता पर कौन सा पुष्प चढ़ाएँ

देवी-देवता आकाश लोक में रहते हैं और वायुतत्त्व प्रधान होते हैं। उनकी भाषा प्रकाश-भाषा है। वायुतत्त्व प्रधान होने के कारण वे गंधप्रिय होते हैं। गंध-तरंगें पृथ्वी लोक से संबंधित हैं। देवी-देवता जब भूलोक पर विचरण करते हैं तो सुगंधमय स्थलों की ओर अधिक आकर्षित होते हैं। कर्मकांड में इसीलिए सुगंधित पदार्थों का प्रावधान किया गया है। प्रत्येक देवी-देवता की गंध-पसंद अलग-अलग होती है, जिसके कारण वे अपनी पसंद की गंध की ओर शीघ्र ही आकृष्ट हो जाते हैं। देवी-देवताओं की गंध-पसंद को ध्यान में रखकर ही देवी-देवता की पूजा करते समय उनकी पसंद के गंधवाले पुष्प, इत्र आदि पूजा में प्रयोग किए जाते हैं। यही नहीं, किस देव-शक्ति को कितनी पुष्प-पत्तियाँ अर्पित करनी हैं, यह गणित भी हमारे ऋषि-मुनियों ने निर्धारित कर रखा है।

पूजा-पाठ करनेवाले का श्रद्धा भाव भी बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। क्योंकि श्रद्धा से अर्पित पदार्थ उस गंध पदार्थ की गुणवत्ता को और बढ़ा देते हैं, जब हम देवी-देवता पर पुष्प-पत्तियाँ या इत्र आदि अर्पण करते हैं तो उन पुष्प-पत्तियों की तरंगें देवशक्ति को आकृष्ट करती हैं, जिसका लाभ पूजा करनेवाले को पहुँचता है।

किस देवी-देवता पर किस तरह का पुष्प-पत्तियाँ व इत्र चढ़ाएँ

पुष्प का नाम	*किस देवी-देवता को अर्पित*	*अधिकाधिक तरंगें आकर्षित करने हेतु आवश्यक पुष्पों की न्यूनतम संख्या*
१. मोगरा (बेला)	दुर्गा देवी	१ अथवा ९
२. रजनीगंधा	शिव	९ अथवा १०
३. कनेर	महाकाली	९
४. तगर	ब्रह्मा	६
५. स्वस्तिका	सरस्वती (श्वेत)	९ (आदिशक्ति के हर रूप को ९ अंक से पूजा जाता है)
६. गुलदाऊदी या गेंदा या कमल	महालक्ष्मी व लक्ष्मी	९ वही
७. कोई भी रक्तपुष्प	गणेश	१, ३, ५, ७
८. तुलसी	विष्णु	वही
९. जाई (चमेली का एक दूसरा प्रकार)	श्रीराम	४
१०. चमेली	हनुमान्	५
११. जूही	दत्तात्रेय	७
१२. कृष्णकमल	श्रीकृष्ण	३

किस देवता को किस सुगंध का इत्र अर्पण करना चाहिए

देवता, देवी	*किस सुगंध का इत्र*	*देवी, देवता*	*किस सुगंध का इत्र*
१. श्रीराम	जाई (एक प्रकार की चमेली)	५. श्रीलक्ष्मी	गुलाब
२. हनुमान्	चमेली	६. गणपति	हिना
३. शिव	केवड़ा	७. दत्तात्रेय	खस
४. श्रीदुर्गा देवी	मोगरा	८. श्रीकृष्ण	चंदन

पुष्प व इत्र के अतिरिक्त कुछ विशेष पत्तियों को भी देवपूजा में शामिल किया जाता है। जैसे विष्णु पर तुलसी के पत्ते, शिव पर बिल्वपत्र (बेल के पत्ते) और गणेश पर दूब अर्पित की जाती है। देवी-देवता को पाँच पत्ते चढ़ाने चाहिए, जो ब्रह्मांड के पृथ्वी, जल, तप, वायु व आकाश पंचतत्त्वों के द्योतक हैं। पत्ते, पुष्प, फल आदि अपनी प्राणवायु द्वारा ब्रह्मांड की सत्त्व तरंगों व देव तत्त्वों को ग्रहण करके पूजा करनेवाले जीव का कल्याण करते हैं। इस कारण इन्हें, जब ये ताजा व साफ-सुथरे हों, तभी अर्पित करना चाहिए, क्योंकि उस समय तक इनकी अपनी प्राणवायु देवशक्ति प्राप्त रखने की क्षमता रखती है। बासी फल-फूल कागज के फूलों की तरह होते हैं।

कमल का फूल व आँवला तीन दिन तक शुद्ध रहने की क्षमता रखते हैं, क्योंकि इन दोनों में प्राणवायु व धनंजयवायु तीन दिन तक रज-तम से लड़ने की क्षमता रखती हैं। इसी प्रकार तुलसी व बेलपत्र सूखने के बाद भी शुद्ध बने रहते हैं। ये वैज्ञानिक तथ्य हैं। तुलसी में ५० प्रतिशत विष्णुतत्त्व और बिल्वपत्र में ७० प्रतिशत शिवतत्त्व विद्यमान होता है।

शरत् पूर्णिमा की रात्रि में चंद्र किरणों से भीगी खीर खाने का विज्ञान

सूर्य की किरणों व चंद्रमा की रश्मियों में रोगनाशक शक्ति होती है, ऐसी भारत के मनीषियों की हजारों साल पुरानी मान्यता है। सूर्य की किरणों का प्रभाव मनुष्य के शरीर पर पड़ता है। इस सत्य को तो आज का मानव भी मानता है। चंद्रमा का मनुष्य के मस्तिष्क पर असर होता है, यह तथ्य भी वह स्वीकारता है। पर चंद्रमा की रश्मियाँ पेड़-पौधों पर असर करती हैं, यह बात वह पूर्णरूप से नहीं स्वीकारता। इसके विपरीत, आर्युवेद के अनुसार चंद्रमा की रश्मियों का वनस्पति पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। चंद्रमा के घटने व बढ़ने के साथ-साथ पेड़-पौधों के अंदर जो रसायन होता है, वह भी घटता-बढ़ता रहता है और उनका प्रभाव भी भिन्न होता है। इस कारण आयुर्वेद में औषधियों को तैयार करने के लिए पेड़-पौधों से फल व पत्तियाँ चंद्रमा की स्थिति के अनुसार तोड़ने का विधान है।

भारतीय मनीषियों का ऐसा मानना है कि शरत् पूर्णिमा के चंद्रमा की रश्मियाँ भौगोलिक स्थिति के कारण भारत के भू-भाग पर विशेष प्रभाव रखती हैं। इसलिए इस रात्रि में देशी गाय के दूध व चावल से बनी चारू (खीर) बहुत लाभदायक होती है। यह विशेष प्रकार से तैयार की जाती है। शुद्ध मिश्री, इलायची मिलाकर उसको मलमल के कपड़े से ढककर रात्रि में ८-९ बजे से अर्धरात्रि के बाद तक चंद्रमा की शीतल व आरोग्यप्रद रश्मियों में रखें। तत्पश्चात् भगवद्स्मरण करते हुए उस खीर को उसी रात्रि को सकुटुंब खाएँ। ऐसा करने से आप वर्ष भर रोग-प्रतिरोधक शक्ति प्राप्त करते हैं। चंद्रमा की रश्मियाँ अपने प्रभाव से खीर को एक अचूक टॉनिक की तरह बना देती हैं। ऐसी भी मान्यता है कि शुक्ल पक्ष में यदि किसान बीज बोते हैं तो उनकी फसल अधिक लाभदायक होगी, क्योंकि चंद्रमा का प्रभाव उस समय बीज पर अपना प्रभाव डालता है और वह सशक्त होकर अंकुरित होता है।

परंतु वायु प्रदूषित इस युग में चंद्रमा की किरणें भी हमें आज शुद्ध रूप में महानगरों में नही मिलतीं। ऐसे में शरत् पूर्णिमा की खीर किसी शुद्ध स्थान पर बनाना हितकर है।

सनातन-ध्वजा केसरिया क्यों?

हमने भारत के तिरंगे को मान्य कर उसे भारत के राष्ट्रीय ध्वज के रूप में स्वीकारा तो इसमें हमने सर्वप्रथम केसरिया रंग को डाला। इस रंग को इतनी महत्ता देने का कारण था कि यह रंग भारत की मूल संस्कृति से जुड़ा है और इसके पीछे एक गहरा 'दर्शन' है।

केसरिया रंग दो प्राथमिक रंगों लाल व पीला का मिश्रण है। पुरातन मान्यताओं के अनुसार लाल रंग माँ दुर्गा, गणेश और हनुमान से जुड़ा है। यह रंग शक्ति का द्योतक है। यह रंग कर्मठता को इंगित करता है। यह रंग पौरुष को दरशाता है। यह रंग हमें कर्मशील होने को कहता है। दूसरी ओर पीला रंग विष्णु और बृहस्पति दोनों का परिचायक है। विष्णु को सदा से शांत रहनेवाले, पर हर समस्या का समाधान निकालनेवाले विवेकशील देव के रूप में माना गया है। बृहस्पति को तो ज्ञान-स्वरूप ही कहते हैं। वे बुद्धिमत्ता के सागर हैं।

इस प्रकार केसरिया रंग जो लाल और पीले रंगों का मिश्रण है, जहाँ हमें सक्रिय, कर्मठ और पौरुष होने की प्रेरणा देता है, वहीं यह भी संदेश देता है कि हम सक्रिय रहते हुए विवेक से भी काम लें। ऐसा कर्म जो बुद्धि और विवेक के साथ न किया गया हो, कल्याणकारी नहीं हो सकता। इसीलिए इन दोनों रंगों की युक्तिवाला केसरिया रंग महत्त्वपूर्ण है। यही इसका 'दर्शन' है।

हमारे ऋषि-मुनि भगवा इसी कारण पहनते थे, ताकि उन्हें दोनों रंगों की तरंगें प्राप्त होती रहें। वे हमारे प्राचीन समाज के सक्रिय अंग थे, केवल उपदेशक नहीं। जो लोग यह समझते हैं कि साधु-संत समाज के निष्क्रिय अंग हैं, तो वे इनके योगदान को नहीं पहचानते। सनातन ऋषि-मुनियों से प्रेरणा लेनी चाहिए। वैसे आजकल के साधु-संत अधिकतर पुरातन कसौटी पर खरे नहीं उतरते।

मंगलवार को नाखून व बाल क्यों नहीं काटने चाहिए?

समाज को व्यवस्थित रूप देते समय जब साप्ताहिक दिनों को ग्रहों से जोड़कर उनका नामकरण किया गया तब यह ध्यान रखा गया कि किस दिन

कौन सा ग्रह पृथ्वी पर अपना अधिक प्रभाव रखेगा, जिसके कारण मनुष्यों पर भी उस ग्रह का प्रभाव पड़ेगा।

मंगलवार को मंगल ग्रह का पृथ्वी पर प्रभाव अन्य ग्रहों की अपेक्षा अधिक होता है। खगोलशास्त्र के अनुसार मंगल एक उग्र ग्रह है, इसलिए सप्ताह के इस दिन उसकी तरंगें मनुष्य को अधिक प्रभावित करती हैं, जिस कारण मनुष्य के शरीर में अधिक ऊर्जा या गरमी पैदा होती है। इससे मनुष्य के शरीर की आंतरिक शक्ति व ताप बढ़ जाता है। प्रकृति ने हमारे शरीर की संरचना इस प्रकार से की है कि वह अपने आप ही आवश्यकता के अनुसार शरीर की गरमी-सर्दी को संतुलित कर लेता है। इस संतुलन को बनाने में हमारे शरीर के व्यर्थ माने जानेवाले अंग नाखून व बाल दोनों की बड़ी भूमिका होती है, विशेषरूप से मंगलवार के दिन, क्योंकि मंगलवार को शरीर में उत्पन्न होनेवाली अतिरिक्त ऊर्जा व मानव-विद्युत् (Human electricity) को ये दोनों अंग अपने में संचित करके रखते हैं और इस प्रकार से शरीर की आंतरिक ऊर्जा या मानव-विद्युत् को संतुलित बनाए रखने में सहायक होते हैं।

मंगलवार के दिन जब हम बाल या नाखून काटते हैं तो शरीर की मानव-विद्युत् का क्षय हो जाता है और उसका आंतरिक संतुलन बिगड़ जाता है, जो हमारे शरीर के लिए हानिकारक है। इसी वैज्ञानिक सत्य के कारण हमारे पूर्वजों ने इस दिन बाल व नाखून काटने को अनुचित बताया है। आधुनिक विज्ञान का ध्यान शायद अभी तक शरीर के इस वैज्ञानिक तथ्य भी ओर नहीं गया है। निश्चय ही इस पर शोध करने की आवश्यकता है।

आज ऐसे अनेक लोग हैं, जिनका मानना है कि इस मान्यता में कोई सत्यता नहीं है, ये सब बातें मात्र अंधविश्वास हैं। परंतु वे यह नहीं समझते कि ऐसा करने से उनका जो शारीरिक नुकसान होता है, वह एक बार में इतना न्यून होता है कि उस नुकसान का एकदम प्रभाव महसूस नहीं होता, पर अंततः होता जरूर है। वह प्रभाव कुछ समय बाद, जिसके किसी विकार को पैदा कर देता है, वास्तविक कारण का पता ही नहीं चलता। इसी कारण, पहले जब आधुनिक हेयर सैलून नहीं थे तब नाई की दुकानें मंगलवार को बंद रहती थीं। आज भी मंगलवार को ऐसी कुछ दुकानें बंद रहती हैं।

सोते समय पाँव दक्षिण दिशा की ओर क्यों नहीं रखने चाहिए?

सनातन मान्यता के अनुसार हमारा शरीर मस्तिष्क उत्तर और पाँव दक्षिण दिशा के द्योतक हैं। सौरमंडल में ध्रुव (Palastar) उत्तर दिशा में स्थित है। यदि कोई व्यक्ति दक्षिण की ओर पाँव और सिर उत्तर दिशा की ओर करके सोएगा तो ध्रुवाकर्षण के सिद्धांतानुसार उसके पेट का भोजन पचने के बाद मल-अंश के रूप में नीचे गुदा की ओर जाने के बजाय ऊपर हृदय की ओर खिंचेगा, जिससे उस व्यक्ति के हृदय व मस्तिष्क पर हानिकारक प्रभाव पड़ेगा। यदि वह व्यक्ति निरंतर अपने पाँव दक्षिण दिशा की ओर रखकर सोएगा तो कुछ समय बाद बीमार हो जाएगा। हिंदू धर्मशास्त्रों में दक्षिण दिशा को यम (मृत्यु) का स्थान माना जाता है, इस कारण दक्षिण दिशा की ओर निरंतर पाँव करके सोनेवाले व्यक्ति की आयु घटती है। इसीलिए दक्षिण दिशा की ओर पाँव रखकर न सोने को कहा गया है।

इसके विपरीत, यदि हम उत्तर दिशा की ओर पाँव करके सोएँगे तो चुंबकीय सिद्धांत (Magnetic principle) के अनुसार पेट में पड़ा भोजन ठीक तरह से पचकर नीचे गुदा की ओर जाएगा। उस व्यक्ति को अच्छी नींद आएगी और सुबह वह चुस्त-दुरुस्त होकर उठेगा, क्योंकि ध्रुवाकर्षण के सिद्धांतानुसार दक्षिण से उत्तर दिशा की ओर चल रहा प्राकृतिक विद्युत् प्रवाह हमारे मस्तिष्क से गुजरता हुआ पाँवों के रास्ते शरीर से बाहर प्रवाहित हो जाएगा। फलतः उस व्यक्ति का स्वास्थ्य ठीक रहेगा और उसकी आयु भी बढ़ेगी।

प्राचीन काल में पुरुषों का कर्ण-छेदन क्यों?

हमारे प्राचीन ऋषियों-मुनियों को मानव शरीर की आंतरिक रचना का पूरा व गहरा ज्ञान था। आयु बढ़ने पर प्रायः शौच करते समय जोर लगाने से मूत्र के साथ अज्ञातरूप से वीर्य स्खलित होने लगता है और यदि इस पर ध्यान न दिया जाए तो यह एक भयंकर रोग का रूप धारण कर सकता है। परंतु यदि कानों को बिंधवा लिया जाए तो वीर्य स्खलित होने का भय नहीं रहता। यह

एक प्रकार का उपचार है। प्राचीन काल में कानों का या यज्ञोपवीत के समय छेदना किया जाता था, ताकि कानों की नाड़ियाँ जाग्रत् होकर संचेष्ट हो जाएँ। इस प्रकार ऋषि-मुनि सम्मिलित रूप से अपना वीर्य संरक्षण करते थे और साथ ही यज्ञोपवीत की पवित्रता भी बनाए रखते थे।

कानों के भेदन से व्यक्ति डायबिटीज, प्रमेह एवं मल-मूत्र संबंधित अनेक बीमारियों से बच सकता है। आजकल तो कान बिंधवाना और उनमें सुंदर लौंग पहनना पुरुषों के लिए भी एक फैशन बन गया है। उनका यह फैशन अनजाने में उनके लिए कितना हितकर है, वे यह नहीं जानते।

आपने कई लोगों को लघुशंका करते समय कान पर जनेऊ लपेटे देखा होगा, उनकी इस मान्यता के पीछे भी इसी प्रकार का एक वैज्ञानिक सत्य है। आयुर्वेद के अनुसार 'लोहितिका' नामक एक विशेष नाड़ी मनुष्य के दाहिने कान से होकर उसके मल-मूत्र द्वार पर पहुँचती है। यदि इस कान की नाड़ी को पीछे से थोड़ा सा हाथ से दबाएँ तो व्यक्ति का मूत्रद्वार स्वत: ही पूर्णरूप से खुल जाएगा और उसके ब्लैडर में जितना भी मूत्र होगा, वह सारा बाहर निकल जाएगा। जमीन पर बैठकर लघुशंका करने से भी पूरा मूत्र बाहर निकलने में सहायता होती है। खड़े होकर लघुशंका करने से सारा मूत्र सरलता से बाहर नहीं निकलता।

शरीर की इस नाड़ी का संबंध अंडकोष से भी है। इस सत्य को स्वीकारते हुए आजकल डॉक्टर हर्निया जैसी बीमारी की रोकथाम के लिए इस नाड़ी को छेद देते हैं। इसका एक और लाभ यह है कि ऐसा करने से व्यक्ति का मूत्र शरीर के विषैले अंश लेकर सरलता से अंतिम बूँद तक उतर जाता है और उसे मूत्र संबंधी कोई रोग नहीं होता। आधुनिक डॉक्टर जो अब कर रहे हैं, हमारे ऋषि-मुनियों ने इन उपायों को हजारों वर्ष पूर्व जानकर मनुष्य के जीवन में सम्मिलित कर लिया था।

□

कुछ प्रमुख मंत्र-श्लोक

गायत्री मंत्र

ॐ भूर्भव स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं
भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्॥

उस प्राणस्वरूप, दु:खनाशक, सुखस्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अंत:करण में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग पर प्रेरित करें।

महामृत्युंजय मंत्र

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्॥

हम त्रिनेत्रवाले (महेश्वर) की वास्तविकता का चिंतन करते हैं, जो जीवन की मधुर परिपूर्णता को पोषित करता है और वृद्धि करता है। ककड़ी की तरह हम इसके तने से अलग (मुक्त) हों, अमरत्व से नहीं बल्कि मृत्यु से मुक्त हों।

शांति पाठ

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः
पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः
सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥

द्यौ, अंतरिक्ष, पृथ्वी, आप:, ओषधियाँ, वनस्पतियाँ, विश्वे देवा, शब्दब्रह्म तथा सबकुछ मेरे लिए शांतिमय हो। स्वयं शांति ही शांतिमयी हो। वही सर्वशांति मुझे बढ़ाए।

शिव-पार्वती वंदना

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं, भुजगेन्द्रहारम्।
सदावसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि॥

कर्पूर के सदृश गौर वर्णवाले, भक्तों पर करुणावश अवतार लेनेवाले, संसार को मुक्ति एवं मुक्तिरूप में सार स्वरूप, नागराज को हार रूप में पहननेवाले, मेरे हृदयरूप कमल में रहनेवाले भगवान् शिव को माँ भवानी के सहित नमन करता हूँ।

वागर्थाविव सम्प्रक्तौ वागर्थ प्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ॥

शब्द में अर्थ और अर्थ में शब्द की तरह समाए, शब्द और अर्थ की कामना से मैं जगत् के माता-पिता परमेश्वर-पार्वती की वंदना करता हूँ।

बिल्वमंगल की प्रार्थना

हे देव हे दयित हे भुवनैकबन्धो
हे कृष्ण हे चपल हे करुणेकसिन्धो।
हे नाथ हे रमण हे नयनाभिराम
हा हा कदा नु भवितासि पदं दृशोर्मे॥

हे देव! हे दयित! हे त्रिभुवन के अद्वितीय बंधु! हे कृष्ण! हे लीलामय! हे करुणा के एकमात्र सिंधु! हे नाथ! हे प्रियतम! हे नयनाभिराम! हाय-हाय, मैं तुम्हारे चिन्मय स्वरूप को कब देख पाऊँगा?

कुंती की प्रार्थना

विपदः सन्तु नः शश्वत्तत्र तत्र जगद्गुरो।
भवतो दर्शनं यत्स्यादपुनर्भवदर्शनम्॥
जन्मैश्वर्यश्रुतश्रीभिरेधमानमदः पुमान्।
नैवार्हत्यभिधातुं वै त्वामकिञ्चनगोचरम्॥
नमोऽकिञ्चनवित्ताय निवृत्तगुणवृत्तये।
आत्मारामाय शान्ताय कैवल्यपतये नमः॥

जगद्गुरो श्रीकृष्ण! हम लोगों के जीवन में सर्वदा पग-पग पर विपत्तियाँ आती रहें; क्योंकि विपत्तियों में ही निश्चित रूप से आपके दर्शन हुआ करते हैं और आपके

दर्शन होने पर फिर पुनर्जन्म का चक्र मिट जाता है। ऊँचे कुल में जन्म, ऐश्वर्य, विद्या और संपत्ति के कारण जिसका मद बढ़ रहा है, वह मनुष्य तो आपका नाम भी नहीं ले सकता; क्योंकि आप तो उन लोगों को दर्शन देते हैं, जो अकिंचन हैं। आप अकिंचनों के (जिनके पास कुछ भी अपना नहीं है, उन निर्धनों के) परम धन हैं। आप माया के प्रपंच से सर्वथा निवृत्त हैं, नित्य आत्माराम और परम शांतस्वरूप हैं। आप ही कैवल्य मोक्ष के अधिपति हैं। मैं आपको बार-बार नमस्कार करती हूँ।

सूर्यदेव-प्रार्थना

आदित्यस्य नमस्कारं ये कुर्वन्ति दिने दिने।
जन्मान्तर सहस्त्रेषु दारिद्र्यं नोपजायते।

जो प्रतिदिन सूर्य को नमस्कार करते हैं, उन्हें हजारों जन्म तक दरिद्रता का सामना नहीं करना पड़ता, अर्थात् वे सुखी एवं समृद्ध रहते हैं।

गीता-उपदेश

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मनं सृजाम्यहम्॥

हे अर्जुन! जब-जब धर्म की हानि होती है, तब-तब धर्म की स्थापना के लिए मैं अवतार लेता हूँ।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही॥

जैसे मनुष्य जीर्ण-शीर्ण, पुराने वस्त्रों को त्यागकर नए वस्त्रों को ग्रहण करता है, ठीक वैसे ही यह जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नए शरीरों को धारण करता है। जीर्ण होने पर ही नया शरीर धारण करना है तो शिशु क्यों मर जाते हैं? यह वस्त्र तो और विकसित होना चाहिए। वस्तुतः यह शरीर संस्कारों पर आधारित है। जब संस्कार जीर्ण होते हैं तो शरीर छूट जाता है। यदि संस्कार दो दिन का है तो दूसरे दिन ही शरीर जीर्ण हो गया। इसके बाद मनुष्य एक श्वास भी अधिक नहीं जीता। संस्कार ही शरीर है। आत्मा संस्कारों के अनुसार नया शरीर धारण कर लेता

है।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥

अर्जुन! इस आत्मा को शस्त्रादि नहीं काटते। अग्नि इसे जला नहीं सकती। जल इसे गीला नहीं कर सकता और न वायु इसे सुखा सकती है।

सदाचार-प्रशंसा

आचारहीनं न पुनन्ति वेदा
यद्यप्यधीताः सह षड्भिरङ्गैः।
छन्दांस्येनं मृत्युकाले त्यजन्ति
नीडं शकुन्ता इव जातपक्षाः॥

शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छंद, व्याकरण और ज्योतिष—इन छह अंगों सहित अध्ययन किए हुए वेद भी आचारहीन मनुष्य को पवित्र नहीं करते। मृत्युकाल में आचारहीन मनुष्य को वेद वैसे ही छोड़ देते हैं, जैसे पंख उगने पर पक्षी अपने घोंसले को।

ईशा वास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

यह सब ईश्वर के द्वारा अभिव्याप्त है, जो कुछ भी इस जगती में चराचर प्रपंच विद्यमान है। उस ईश्वर के द्वारा दिए गए पदार्थों का निष्काम भाव से सेवन करो। किसी के धन का लालच मत करो।

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः।
देवा नो यथा सदमिद्वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे॥

चारों ओर से हमें अहिंसित, अनाक्रांत, शत्रु-भेदक और कल्याणकारी यज्ञ प्राप्त होएँ। जिस प्रकार कि देवता सदा हमारी अभिवृद्धि में तल्लीन रहें और दिन-प्रतिदिन वे अप्रमाद भाव से हमारे रक्षक बने रहें।

वेद-मंत्र

ओ३म् विश्वानि देव सवितुर्दुतानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आ सुव॥

तू सर्वेश सकल सुखदाता शुद्धस्वरूप विधाता है।

उसके कष्ट दूर हो जाते, शरण तेरी जो आता है॥
सारे दुर्गुण दुर्व्यसनों से हमको नाथ बचा लीजे।
मंगलमय गुण, कर्म, पदार्थ प्रेमसिंधु हम को दीजे॥

ओ३म् यः प्राणतो निमिषतो महित्वक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशेऽस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥
तूने अपनी अनुपम माया से जग-ज्योति जगाई है।
मनुज और पशुओं को रचकर निज महिमा प्रकटाई है॥
अपने हिय-सिंहासन पर श्रद्धा से तुझे बिठाते हैं।
भक्ति भाव से भेंटें लेकर शरण तुम्हारी आते हैं॥

ओ३म् प्रजापते न त्वेदतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥
तुझ से बड़ा न कोई जग में, सब में तू ही समाया है।
जड़, चतन सब तेरी रचना, तुझमें आश्रय पाया है॥
हे सर्वोपरि विभो! विश्व का तूने साज सजाया है।
धन दौलत भरपूर दीजिए, यही भक्त को भाया है॥

ओ३म् स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भूवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त॥
तू गुरु है, प्रजेश भी तू है, पाप-पुण्य फलदाता है।
तू ही सखा बंधु मम तू ही, तुझ से ही सब नाता है।
भक्तों को इस भव-बंधन से, तू ही मुक्त कराता है।
तू हा अज, अद्वैत, महाप्रभु सर्वकाल का ज्ञाता है॥

भोजन से पूर्व मंत्र

ॐ सहनाववतु सहनौ भुनक्तु।
सह वीर्यं करवावहे। तेजस्विनाव धीतमस्तु मा विद्विषावहे॥

□□□